



श्रुतसागर | श्रुतसागर

SHRUTSAGAR (MONTHLY)

November 2014 Volume : 01, Issue : 06

Annual Subscription Rs. 150/- Price Per copy Rs. 15/-

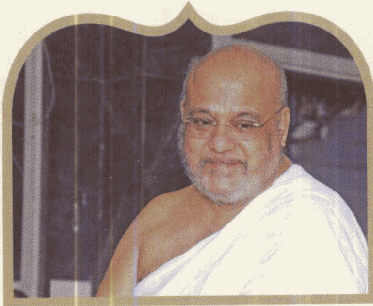
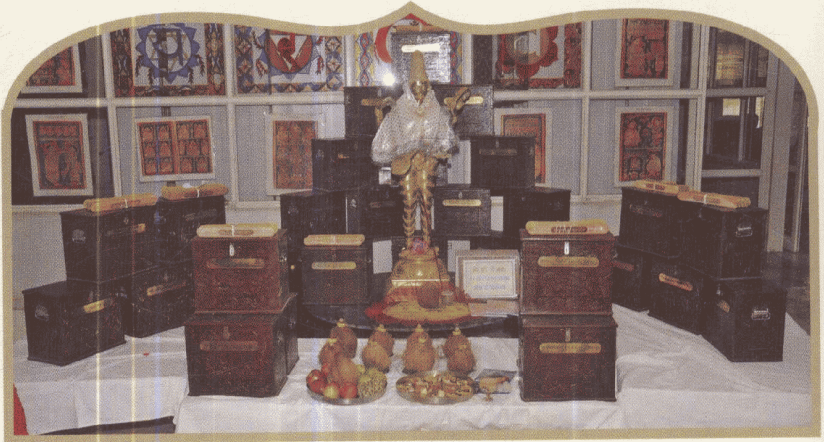
Editor : Hiren Kishorbhai Doshi



श्री राणकपुर तीर्थमां बिराजित श्री नन्दीधरद्वीप तीर्थ पट्ट

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर

पू. आचार्यदेव श्री अमृतसागरसूरीश्वरजी म. सा. नी पुनित प्रेरणाथी
पंचांगी ताडपत्रीय प्रतना समर्पण पर्व निमित्ते
पीस्तालीस आगम पूजानी केटलीक विशिष्ट क्षणो



आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर का मुखपत्र

श्रुतसागर

श्रुतसागर

SHRUTSAGAR (Monthly)

वर्ष-१, अंक-6, कुल अंक-6, नवम्बर-२०१४ ❖ Year-1, Issue-6, Total Issue-6, November-2014

वार्षिक सदस्यता शुल्क-रु. १५०/- ❖ Yearly Subscription - Rs.150/-

अंक शुल्क - रु. १५/- ❖ Issue per Copy Rs. 15/-

आशीर्वाद

राष्ट्रसंत प. पू. आचार्य श्री पद्मसागरसूरीश्वरजी म. सा.

❖ संपादक ❖

हिरेन किशोरभाई दोशी

एवं

ज्ञानमंदिर परिवार

१५ नवम्बर, २०१४, वि. सं. २०७१, कारतक वद-८



प्रकाशक

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र कोबा, गांधीनगर-३८२००७

फोन नं. (०७९) २३२७६२०४, २०५, २५२ फेक्स : (०७९) २३२७६२४९

Website : www.kobatirth.org Email : gyanmandir@kobatirth.org

अनुक्रम

१	संपादकीय	हिरेन के. दोशी	३
२	गुरूवाणी	आचार्य पद्मसागरसूरि	५
३	Beyond Doubt	Acharya Padmasagarsuri	९
४	श्रीनन्दीश्वरद्वीपस्थितजिनभवनपूजा	मुनिश्री सुयश/सुजशचंद्रविजयजी	११
५	योगनिष्ठ आचार्यश्री बुद्धिसागरजी कृत 'आत्मदर्शन' अने 'आत्मतत्त्वदर्शन' ग्रंथो विशेष थोडुंक	कनुभाई ल. शाह	४७
६	हस्तप्रत लेखन परंपरा से सम्बद्ध विद्वान परिचय	संजयकुमार झा	५२
७	समराइच्च कहा परिचय	पं. श्री धुरंधरविजयजी	५६
८	सम्राट संप्रति संग्रहालयना प्रतिमा लेखो	हिरेन के. दोशी	७३
९	पंचाचार्यपदप्रदानाष्टकम्	संजयकुमार झा	७७
१०	पुस्तक समीक्षा	डॉ. हेमन्त कुमार	७९

प्राप्तिस्थान :-

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर

तीन बंगला, टोलकनगर

परिवार डाईनिंग हॉल की गली में

पालडी, अहमदाबाद - ३८०००७

फोन नं. (०७९) २६५८२३५५

સંપાદકીય

હિરેન કે. દોશી

શ્રુતસાગરનો છઠ્ઠો અંક તમારા હાથમાં છે.

વિશેષ અંકની આ વર્ષની શ્રેણિમાં આ બીજો અંક પ્રસ્તુત છે. આમ તો આ અંકને પ્રકાશિત કરવાનો સમય વ્યતીત થયો, પણ થોડા દિવસો બાદ એક વિશિષ્ટ અવસર અમારા સહુ માટે હોઈ એ અવસર પ્રસંગના આલંબને આ અંક પ્રકાશિત થઈ રહ્યો છે.

વાત નાકોડા તીર્થમાં ઉજવાતા એક સોના જેવા અવસરની છે. એક સાથે પાંચ પાંચ શ્રમણ ભગવંતો નમસ્કાર મહામંત્રના તૃતીય સ્થાને બિરાજમાન થવાના છે. વીતરાગસ્તોત્રમાં જે કલિકાલની હેમચંદ્રાચાર્ય પ્રશંસા કરે છે એ કલિકાલને પરમાત્માના શાસનની સ્પર્શના કરાવવામાં શ્રમણ ભગવંતોનો બહુ ઉદાર ફાળો છે.

નમસ્કાર સ્તોત્ર પછી તરત જ પંચિદિય સૂત્રની સ્થાપના દ્વારા ગુરુ પદની મહત્તા અને આવશ્યકતા બતાવી છે. ગુરુતત્ત્વની મહત્તા ભારત કે દુનિયાની કોઈ પણ સંસ્કૃતિ માટે શ્વાસવાયુના સ્થાને રહી છે. અને એમાંય ખાસ કરીને ભારતની સાંસ્કૃતિક પરંપરામાં ગુરુતત્ત્વનો મહિમા જે રીતે ગવાયો છે એવો પ્રાયઃ અન્ય કોઈ સંસ્કૃતિએ કે પરંપરાએ ગાયો નથી. ગુરુતત્ત્વની પ્રાપ્તિ માટે પશ્ચિમ જેવા બાહ્ય સુખ-સમૃદ્ધિ પ્રચુર દેશના માનવને પણ પૂર્વનો આશરો લેવો પડ્યો છે. આવા વિશિષ્ટ ગુરુતત્ત્વની ઉપાસના અને આરાધના કરવાનો અવસર આપણને સહુને સદ્ભાગ્યે પ્રાપ્ત થયો છે. આપણે સહુ એ અવસરને આદરપૂર્વક વધાવીએ...

આ અંકની વાત:-

ગયા અંકમાં પ્રકાશિત વાક્સંયમ અંગે પૂજ્ય ગુરુદેવશ્રીએ આપેલ પ્રવચનને આ અંકમાં એ જ પ્રવચનનો આગળનો ભાગ પ્રકાશિત કર્યો છે. તો સાથે સાથે વાચકોની માંગણીને અનુસાર પૂજ્ય ગુરુભગવંતશ્રીએ આપેલ પ્રવચનોને ગુજરાતી અને અંગ્રેજી ભાષામાં પણ પ્રકાશિત કરવાનું પ્રારંભ કર્યું છે.

આ અંકમાં આચાર્ય શ્રી રત્નશેખરસૂરિજી કૃત નન્દીશ્વરદ્વીપ સ્થિત જિનભવનપૂજા પ્રકાશિત કરી છે. આખી પૂજા સંસ્કૃતમાં છે. આવા વિશિષ્ટ વિષયોને આવરી લેતી ગીર્વાણભાષાની આ પ્રકારની કૃતિ પૂજા સાહિત્યમાં એક નવી ખાત પાડે છે.

શ્રુતસાગર પત્રિકાના માધ્યમે આ કૃતિ સૌ પ્રથમ વાર પ્રકાશિત થવા પામી રહી છે. એનો અમને ખૂબ આનંદ છે. આ પ્રકારની વિશિષ્ટ કૃતિ પાઠવવા બદલ પૂ. મુનિવર્ય શ્રી સુયશ-સુજસચંદ્રવિજયજી મ. સા. અગણિત આભારના અધિકારી છે.

જ્ઞાનમંદિરમાં સંગૃહીત માહિતીઓના આધારે નન્દીશ્વર દ્વીપ સંબંધી અન્ય કૃતિઓની સૂચિ અત્રે આપી છે, જે ઉપયોગી નીવડશે. નન્દીશ્વર દ્વીપની પ્રસ્તાવનામાં નન્દીશ્વર દ્વીપ સંબંધી સંક્ષિપ્ત માહિતીઓ પ્રકાશિત કરી છે. નન્દીશ્વર દ્વીપ સંબંધી વધુ

जाणवा ईच्छुक वाचकोए बृहत्संग्रहणी, क्षेत्तसमास, जैन कॉस्मोलॉजी जेवा ग्रंथोनुं अवलोकन करवुं...

कषायोनुं उपशमन करवा माटे आपणे त्यां कथा साहित्यमां श्रेष्ठ कही शकाय एवी अजोड कथा एटले समरादित्य... आ कथा मूळ तो प्राकृतमां छे. अने एना कर्ता पू. हरिभद्रसूरिजी महाराज एटले एमां वहेता रस अने कथाना आलेखनमां शुं बाकी रहे? अलबत् कथाना सर्व रसो अने एना परिपूर्णांग वाळी कथा कही शकाय.

आ कथा उपर वर्तमानमां विविध भाषामां घणुं साहित्य उपलब्ध छे. ए उपलब्ध साहित्यमां पण एक नोखी भात पाडतुं श्री प्रियदर्शननी पोतीकी कलमे लखायेलुं समरादित्य आजे जैन अने जैनैतर समाजमां अत्यंत लोकप्रिय छे. ए संपूर्ण कथानुं हिन्दी रूपांतरण नवा साज-सज्जा साथे श्री नाकोडातीर्थे सूरि सिंहासनारोहण महोत्सव प्रसंगे (भाग १-९नुं) विमोचन थई रह्युं छे.

श्रुतसागरना वाचकोने समरादित्यनो परिचय थाय, जीवनमां सर्जाता कषायो, आवेगो, उकळाट, अने अशांति खरेखर आवी औषध जेवी कथाना वाचनथी उपशमे ए ज आशयथी जैन सत्यप्रकाशमांथी समराईच्च कहानो परिचय अले साभार प्रकाशित कर्यो छे. आगामी दिवसोमां आ कथा ज्ञानमंदिरना वितरण स्थळथी आप प्राप्त करी शकशो.

योगनिष्ठ प. पू. आ. गुरुदेवश्री बुद्धिसागरसूरिश्वरजी म. सा. नुं आचार्यपदनुं शताब्दिवर्ष अत्यारे प्रवर्तमान छे त्यारे पू. बुद्धिसागरसूरिश्वरजी म. सा.ना साहित्य सर्जननी पाछळ छुपायेली एमनी आध्यात्मिक प्रतिभानो परिचय करावी आपतो लेख 'योगनिष्ठ आचार्यश्री बुद्धिसागरसूरिजी कृत आत्मदर्शन अने आत्मतत्त्वदर्शन ग्रंथो विशेषे थोडुंक' अले प्रकाशित कर्यो छे.

आम तो आवा सर्जक के एमना सर्जन विशेषे ज्यारे लखातुं होय छे, त्यारे एमना विशेषे वांचवा मळता अने लखाता शब्दो खरेखर ओछा पडता होय छे. एमना सर्जनने के सर्जकने मूलववा... अने एटले ज लेखमां 'थोडुंक' शब्द खास उमेर्यो छे.

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिरना प्रोग्राममां केवा-केवा प्रकारनी माहितीओ अने केवी झीणवट राखवामां आवे छे. एनो वाचकोने परिचय थाय अने एना परिचय द्वारा वाचकोने आ प्रकारना स्वाध्याय माटे रुचि वधे ए हेतुसर आ प्रकारनी लेख श्रेणिमां गया अंकमां प्रकाशित 'हस्तप्रत लेखन परंपरा से सम्बद्ध विद्वान परिचय'नो आगळनो भाग अले प्रकाशित कर्यो छे.

तो विशेषांकनी श्रेणिमां सम्राट संप्रति संग्रहालयना धातुविभागमां रहेला धातुबिंबोना लेखो अले प्रकाशित कर्या छे. तो साथे साथे दर अंकमां प्रकाशित थता पुस्तक परिचयमां आ वखते चिकागो प्रश्नोत्तरनो संक्षिप्त परिचय प्रकाशित करवामां आव्यो छे. साथे साथे पदारोहण प्रसंगने पामीने पंचाचार्यपदारोहण संबंधी एक अर्वाचीन कृति 'पंचाचार्यपदप्रदानाष्टकम्' अले प्रकाशित कर्युं छे.

गुरुवाणी

आचार्य पद्मसागरसूरि

‘पादौ न तीर्थगतौ’

‘इन पाँवों से कभी तीर्थ यात्रा इसने नहीं की। कभी सत्पुरुषों की सेवा में इन पाँवों का प्रयोग नहीं किया। कभी कोई धर्म प्रवचन में या धर्म यात्रा में ये पाँव नहीं गये। इसलिए इसे तू पूरा का पूरा ही छोड़ दे। भूखे मरना, तेरे लिए भले ही पुण्य न बने परन्तु इसका भक्षण करना, पाप अवश्य बन जाएगा।’

कितना भयंकर दुरुपयोग हमने अपने पावों का किया है। न जाने दिन में गर्मी में कहाँ पाँव दौड़े। पैसे के लिए उस भयंकर गर्मी में भी हम दौड़ते रहे। परन्तु परमात्मा के दर्शन के लिए या साधु सन्तों के दर्शन के लिए कभी अपने पुण्य पुरुषों की सेवा के लिए हमने आज तक पाँवों का प्रयोग नहीं किया तो फिर ये किस काम आए?

हमने अपनी इन्द्रियों का आज तक उपयोग केवल पाप के आगमन के लिए किया है। इन्हें पाप का प्रवेशद्वार बना कर रखा है। पाप के उपार्जन में सारी इन्द्रियाँ माध्यम बन गईं : जबकि इसका उपयोग धर्म का साधन बनने के लिए थे।

किन्तु यह उपयोग धर्म साधना के क्षेत्र में आज तक नहीं किया गया। मोक्ष प्राप्ति का जो साधन था। वह साधन संसार उपार्जन में निमित्त बना। यह बहुत विचारणीय प्रश्न है। पाँव को यदि आपने देख लिया होता, समझ लेते पाँव ही की भाषा से उसके भावों को यदि यह जान लेते, बहुत कुछ पा जाते। पाँव की भी एक भाषा है।

आज तक इस भाषा को हम समझ नहीं पाए। आपने कभी पाँव की नम्रता देखी? इस पाँव की साधुता को देखा? कभी इसने असहयोग भाव से जीवन में अशान्ति उत्पन्न की? कभी हड़ताल की? आपकी आज्ञा का यथावत् पालन किया। यदि पाँव जितनी अकल भी हमारे अंदर आ जाए, तो ये सारी यात्रा मोक्ष की ओर, परमेश्वर की यात्रा बन जाए। पाँव जितनी भी बुद्धिमानी हमारे पास में नहीं। आप देखना, जब हम चलते हैं,

एक पाँव आगे जाता है दूसरा पीछे रहता है। वह कहता है, भई! तुम आगे चलो। मैं तुम्हारे पीछे हूँ, तुम्हारे सहयोग में उपस्थित हूँ। तुम्हारे सहयोग में तैयार हूँ। तुम आगे बढ़ो, जैसे ही वह पाँव आगे बढ़ता है, रुक जाता है। मानो कहता है तुम्हें

लिए बिना मैं आगे नहीं बढ़ूंगा। तुम आगे आओ। इन दोनों पाँवों की मैत्री क्या कभी आपने देखी?

कैसा प्रेम पूर्वक आमन्त्रण है! एक इंच भी पिछला पाँव आगे नहीं जाता। कभी साथ चलने का प्रयास नहीं करता। कभी इनमें यह दुर्भावना नहीं आती कि यह ही आगे क्यों बढ़ता है या मैं ही आगे आगे चलूँगा। हुआ है कभी ऐसा? एक पाँव आगे जाएगा दूसरा पाँव पीछे रहेगा। मैं तुम्हारे लिए सहयोग में, मैं तैयार हूँ। तुम आगे बढ़ो। जो आगे बढ़ेगा वह तुरंत रुक जाएगा।

तुम को छोड़कर मैं आगे नहीं बढ़ूँगा। तुम मेरे साथ चलो मैं तुम्हारी सेवा में तैयार हूँ। जैसे पाँव आगे आएगा, पिछला रुक जाएगा। अगला रुका तो वह तुरंत कहेगा-तेज आगे आओ। दोनों का प्रेम देखो! आपको यहाँ से घर तक पहुँचा देते हैं। घर, दुकान, मकान तक ले जाते हैं। इनमें अगर वैर हो जाए, कटुता आ जाए तो क्या आप यहाँ से जा सकेंगे?

पाँव जितनी भी मन्नता आ जाए, सहयोग की भावना आ जाए तो भी हमारा कल्याण हो जाए। हमने न तो अपनी इन्द्रियों से कुछ सीखा। न अपनी शारीरिक रचनाओं में से कोई अध्यात्मिक चेतना या जागृति प्राप्त की। माल जगत् की चिन्ता में सारा जीवन बरबाद हो गया।

सियार ने साधु की आज्ञा का पालन किया और कहा-मैं भले मर जाऊँ पर इसे न खाऊँगा। आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। ऐसे पापी आदमी की लाश का भक्षण मैं कभी नहीं करूँगा। यह कवि-कल्पना है, बड़ी सुन्दर कल्पना है। यह सारी कल्पना हमारे उपकार के लिए है। हमें जागृत करने के लिए है।

उस महान आचार्य भगवन्त ने भी यह निर्देश इसीलिए दिया।

‘सर्वत्र निन्दा संत्यागो’

जीभ का कितना घोर दुरुपयोग किया। आपने कभी सोचा। ढेर सारी मिठाई आप खा गए। जन्म से लेकर आज तक लड्डू पेडा कितना ही खा गए। क्या जीभ के अन्दर मिठास आई? आज तक नहीं आई खाते-खाते आनी चाहिए थी। आपकी वाणी को मीठा बन जाना चाहिए था। क्षमापना करते समय संवत्सरी के पारणे में मिठाई से क्षमापना करना कि मैंने तुम्हारा बहुत ही दुरुपयोग किया। आज के बाद कभी दुरुपयोग नहीं करूँगा। जन्म से आज तक तुम्हारा स्वाद लिया, तुम्हारा परिचय

श्रुतसागर

7

नवम्बर-२०१४

किया। न जाने कितना-कितना तुम्हारा आहार किया। परतु उस माधुर्य का स्वाद मेरे शब्दों में आज तक नहीं आया। कडवापन ही रहा। मिठाई खा कर के भी मिठास नहीं आई। फिर हम रोज खाते हैं। उससे भी क्षमापना करिए।

तुम्हारे परिचय से मुझमें परिवर्तन क्यों नहीं आया? संकल्प करिये कि ऐसा माधुर्य मेरे शब्दों में आना चाहिए। स्तोकम्, मधुरम्, और निपुणम् शब्द के जो गुण चल रहे हैं। जिसका वर्णन चल रहा है कि कैसे बोलना चाहिए। कैसी मधुरता आनी चाहिए।

निपुणम् जब आप बोलते हैं तो उस कार्य के अंदर उस वाणी के व्यापार के अंदर, आपकी बौद्धिक कुशलता का परिचय मिलना चाहिए, चालबाजी का नहीं, चापलूसी का नहीं। बुद्धि पूर्वक, आत्मा के अनुकूल कुछ बौद्धिक कुशलता का लोगों को परिचय मिलना चाहिए। उसका उपयोग मैं आत्म हित में करूँ। ताकि कार्य के क्लेश से, क्लेश के आगमन से, यह आत्मा मुक्त बने। बुद्धि का उपयोग इस प्रकार से किया जाए।

अन्तर जगत में मेरी आत्मा के गुण लूटे न जाएं। हमने कभी इस प्रकार से विचार नहीं किया, जो होशियार व्यक्ति को करना चाहिए। बाहर लुटने से बचने की हम बहुत कोशिश करते हैं। परन्तु अन्दर लुटने से बचने के लिए, हमने आज तक किसी उपाय पर विचार नहीं किया।



ज्ञानमंदिरना आगामी प्रकाशनों

१. समरादित्य महाकथा, भाग १-९, भाषा हिन्दी

- | | | |
|-------------------|-----------------|----------------|
| १. शोध-प्रतिशोध, | २. द्वेष-अद्वेष | ३. विश्वासघात |
| ४. वैर-विकार | ५. संबंध संघर्ष | ६. स्नेह-संदेह |
| ७. प्रद्वेष-प्रशम | ८. चल-अचल | ९. आक्रोश-आलोक |

२. जैन गच्छ मत प्रबंध

३. रास पद्याकर भाग - ३

४. तपागच्छ गुर्वावली-सागर स्मरणावली

ગુરુવાણી

અહંકાર પતનનું મૂળ

આચાર્ય પદ્મસાગરસૂરિ

ક્ષાયિક ભાવ ઉત્તમ છે. ઔપશમિક ભાવ મધ્યમ છે. ઔદેયિક ભાવ ખરાબ છે, મલિન છે. પ્રીતિને ક્રોધ હણી નાંખે છે અને ક્રોધ તે ઔદેયિક ભાવ છે.

ક્રોધમાં માનવતા ભૂલી જવાય છે. ક્રોધનું પરિણામ ભયંકર છે. ઊકળતું પાણી જેમ ઠંડું થાય તેમ ક્રોધનો આવેશ જતાં તે ઠંડો પડી જાય છે. ક્રોધમાં મનનો પ્રકોપ થાય છે. વિનય અવમાનથી હણાય છે. વિનય અહંકારથી પણ નાશ પામે છે. તીર્થંકરના દીકરા બાહુબલિજીને પણ અહંકારથી વિનય ગુમાવવો પડ્યો હતો.

વિનય ન હોય તેને કદી મોક્ષ મળતો નથી. જેમ પહાડ આડો હોય તો સૂર્યનો પ્રકાશ મળતો નથી તેમ અહંકાર રૂપી પહાડ આડો હોય તેને કદી કેવળજ્ઞાનનો પ્રકાશ મળતો નથી.

સ્થૂલિભદ્રજીએ જેની સાથે બાર વર્ષ સુધી કામરાગ ભોગવ્યો હતો તે જ કોશ્યાની સાથે ચોમાસું કર્યું. ચાર મહિના સુધી કર્મથી, મનથી અને વચનથી બ્રહ્મચર્ય પાળ્યું.

એક ચેલાએ સિંહની ગુફામાં, એકે કૂવાના કાંઠે અને એક સાપના રાફડા ઉપર અને ચોથાએ કોશ્યાને ત્યાં ચોમાસું કર્યું. ત્રણેને ગુરુએ દુષ્કર કહ્યું પણ ચોથાને તો દુષ્કર દુષ્કર કહ્યું.

જે કામ સિંહ કરી શકે તે કામ શિયાળ કરવા જાય તો શિયાળ મરી જાય છે. ત્રણે મુનિઓ કોશ્યાને ત્યાં ચોમાસું કરવા ગયા પણ તે ત્રણે ચરિત્રથી પડી ગયા.

આવા ત્યાગી સ્થૂલિભદ્રને પણ એક વાર અહંકાર આવ્યો અને પોતે સિંહનું રૂપ ધારણ કર્યું. મુનિ મોક્ષને મેળવવા માટે ત્યાગને સહન કરે છે. ત્યાગનો દેખાવ નથી કરવાનો પણ ત્યાગ તો આત્માને ઊંચે લઈ જવા માટે છે. સ્થૂલિભદ્રને મનનો ઔદેયિક ભાવ આવતા વિનય ચાલ્યો ગયો. અને તેને કારણે તેમને ચારપૂર્વના અર્થ શીખવા ન મળ્યા.

માયા મૈત્રીને મારી નાખે છે. માયા આવે એટલે દંભ ઊભો થાય છે. માયાને પડદો ચાલ્યો જતાં સમભાવ આવે છે. સાચા ધ્યેયને સિદ્ધ કરવા માટે પણ માયા નથી કરવાની. મલ્લિકુંવરીને પણ માયાને લીધે સ્ત્રીનો અવતાર લેવો પડ્યો હતો.

સબળ ધ્યેયને મેળવવા સાધનો પણ સબળ જોઈએ. મોક્ષ આપણા જીવનનું ધ્યેય છે. અને તેને પ્રાપ્ત કરવા ઊંચામાં ઊંચા દર્શન અને ચરિત્ર જોઈશે, અને માર્ગ ઉપર ચાલતાં મોક્ષ પ્રાપ્ત થશે. માયા આપણી સહદયતાને તોડી નાખે છે. માયાને લીધે માર્ગસનો ભ્રમ તૂટી જાય છે. ઔદેયિકભાવથી લોભ પણ આવી જાય છે.

Beyond Doubt

Acharya Padmasagarsuri

It was then that the gods said:

यदि त्रिलोकी गणनापरा स्यात्त स्याः समाप्तिर्यदि नायुषः स्यात् ।

पारे परार्द्धं गणितं यदि स्यात्ता णयेन् शेषगुणोऽपिसः स्यात् ॥

“If all the beings of this world endlessly count, without being interrupted by death and reach a number beyond billions, they will never be able to measure the greatness of Lord Mahavira.”

On hearing this, Indrabhuti was more disturbed than before. Pride and jealousy had severely wounded his petty ego and the glory added fuel to fire. At this moment, when he heard the devas praising Lord Mahavira rather than praising him, he was annoyed and was left with no peace of mind. Indrabhuti was now confident that the person annoying him was no ordinary person, but a great magician and an impostor (cheat).

Otherwise, who can delude such a huge crowd of people and also the devas at the same time. His presence was intolerable since there never can be two suns in the sky, two lions can never abide in a single cave and two swords can never fit in one scabbard.

Indrabhuti at once decided to defeat the person in question in scholarly debate and said to himself: “Though he has not invited me for a debate, it doesn't really matter, for the sun never awaits an invitation to pierce the darkness, fire never pardons the hands touching it, the kings and warriors do not tolerate the attacking enemy

SHRUTSAGAR

10

NOVEMBER-2014

and also a lion does not tolerate the one playing with its mane. Then how can I tolerate the wisdom of someone else? I have defeated great pandits and this person is no better than them. A straw is not of much importance against a hurricane which uproots huge trees and is not mighty enough to withstand the current of a flooded

river which sweeps away big elephants. Many years ago, I went on an expedition and till date, I have remained victorious and unparalleled. Since then I have been eagerly waiting for an opportunity like this, whereby I can quench my thirst of debating. With great difficulty I have got a chance and I should not miss this chance.”

Saying this, Indrabhuti began to prepare himself for the visit. When his younger brother, Agnibhuti saw him doing this he said: “Brother, is there any need for an army to trap an ant? An axe is not necessary to cut a straw nor is an elephant required to uproot the beautiful lotus. I do not see the need of a great scholar like you to defeat that so called kevali¹. I request you to grant me the permission to go and defeat Him”. Hearing this, Indrabhuti told Agnibhuti: “Brother, you are absolutely correct. Actually speaking I do not see the necessity for you also to go and debate with Him. Even the youngest of my fivehundred disciples is capable of defeating Him, but I am unable to continue my enthusiasm to defeat Him. A thorn, even if small, is bound to prick; therefore, I myself intend to go. As it is, I have posted victory against all scholars and debators, but just as little grains drop from the mouth of an elephant while eating and while cooking and roasting.

(Continue...)

શ્રીરત્નશેખરસૂરિકૃતા શ્રીનન્દીશ્વરદ્વીપરિથિતજિનભવનપૂજા

મુનિશ્રી સુયશ-સુજશચન્દ્રવિજય

નન્દી એટલે સમૃદ્ધિ અને ઈશ્વર એટલે વૈભવવાળો દીપતો જે દ્વીપ તે નંદીશ્વરદ્વીપ...

જંબુદ્વીપ ફરતે વલયાકારે વીંટલાયેલો ૧,૬૩,૮૪,૦૦,૦૦૦ (એકસો તેસઠ ક્રોડ ચોર્યાસી લાખ) યોજનનો વલયાકારે વિષ્કંભ ધરાવતો દ્વીપ તે નંદીશ્વરદ્વીપ...

ત્રણ ચાતુર્માસિક પર્વ-સિદ્ધચક્રારાધનપર્વ અને પર્યુષણાપર્વના પ્રસંગોમાં તેમજ શ્રીજિનેશ્વરપ્રભુના જન્મ વગેરે કલ્યાણકોની ઉજવણી પછી દેવ-દેવીઓ અઠ્ઠાઈ મહોત્સવ કરવા જાય તે સ્થલ એટલે નંદીશ્વરદ્વીપ...

જીવાભિગમ સૂત્ર-સ્થાનાંગસૂત્ર વગેરે આંગમગ્રંથોમાં તેનું વર્ણન પ્રાપ્ત થાય છે તે વર્ણનના આધારે બનાવેલ તેની પ્રતિક રૂપ લાકડાની રચના સુરતના સૈયદપુરા વિસ્તારમાં આવેલ શ્રાવક શેરીના જિનાલયમાં જોવા મળે છે. તે જ રીતે આરસની બનાવેલ અન્ય રચનાઓ અમદાવાદના દોશીવાડાની પોલમાં તેમજ પાલીતાણામાં ઉપર ઉજમફઈની ટૂંકમાં જોવા મળે છે. પાલીતાણા, આબુ, ગિરનાર, રાણકપુર વિગેરે તીર્થસ્થલોમાં આ નંદીશ્વરદ્વીપના કોતરણીયુક્ત પ્રાચીન પટ્ટો જોવા મળે છે.

આ દ્વીપનો સ્થૂલ પરિચય આપણે કરીશું

જંબુદ્વીપને વલયાકારે વીંટલાયેલો આ નંદીશ્વર દ્વીપ આઠમો દ્વીપ છે તેના અતિમધ્યભાગે ચારે દિશામાં અંજનરત્ના શ્યામ વર્ણના ચાર અંજનગિરિ પર્વત છે, તે ભૂમિતલથી ચોર્યાસી હજાર યોજન ઊંચા એક હજાર યોજન વિસ્તારવાળા છે. (મતાંતરે ૧૪૦૦ યોજન વિસ્તારવાળા છે).

આ ચાર અંજનગિરિ શાશ્વત છે અને તે ચારે ઉપર એક એક શાશ્વત જિનભવન ચૈત્ય છે ઉપરોક્ત ચાર અંજનગિરિમાંના

૧. પૂર્વદિશાના અંજનગિરિ ઉપર સૌધર્મેન્દ્ર,
૨. ઉત્તરદિશાના અંજનગિરિ ઉપર ઈશાનેન્દ્ર,
૩. દક્ષિણદિશાના અંજનગિરિ ઉપર ચમરેન્દ્ર,
૪. પશ્ચિમદિશાના અંજનગિરિ ઉપર બલેન્દ્ર અઠ્ઠાઈ મહોત્સવ કરે છે.

૫. દરેક વાવહીના મધ્યભાગે ઉજ્જવલ વર્ણના સ્ફટિકરત્ના ચોસઠ હજાર યોજન

ઉંચા એક હજાર યોજન ભૂમિમાં ડુંડા, મૂઠાં તથા શિખર ઉપર દસ હજાર યોજન લાંબા પહોળા ધાન્યના પ્યાલા જેવા એક એક દધિમુખપર્વત હોવાથી કુલ સોઠ ચૈત્યો દધિમુખ પર્વતો છે, તે દરેક પર્વત ઉપર એક એક શાશ્વત ચૈત્ય હોવાથી કુલ સોઠ ચૈત્યો દધિમુખ પર્વત ઉપર હોય છે.

તેમાં પૂર્વદિશાના ચાર દધિમુખચૈત્યોમાં સૌધર્મેન્દ્રના ચાર લોકપાલ, ઉત્તર દિશાના ચાર દધિમુખચૈત્યોમાં ઈશાનેન્દ્રના લોકપાલ, દક્ષિણદિશાના ચાર દધિમુખચૈત્યોમાં ચરમેન્દ્રના લોકપાલ તથા પશ્ચિમદિશાના ચાર દધિમુખ- ચૈત્યોમાં બલીન્દ્રના લોકપાલ અઠ્ઠાઈ મહોત્સવ કરે છે.

ઉપરોક્ત સોઠ વાવડીની ચારે દિશાએ પાંચસો પાંચસો યોજન દૂર ગયે પાંચસો યોજન પહોળા, એક લાખ યોજન લાંબા એક એક વન હોવાથી કુલ ચોસઠ વન છે. દરેક અંજનગિરિને ફરતી આવેલી ચાર-ચાર વાવડીઓના આંતરમાં દરેકમાં બે બે રતિકર પર્વત હોવાથી એક અંજનગિરિને ફરતા આઠ આઠ એમ કુલ ચાર અંજનગિરિને ફરતા કુલ મઠી બત્તીસ રતિકર પર્વતો હોય છે. તે દરેક પદ્મરાગમણિમય (મતાંતરે સુવર્ણમય) હોય છે. એ દરેક પર્વત ઉપર, શાશ્વતજિન ચૈત્ય હોવાથી કુલ બત્તીસ જિનચૈત્ય રતિકર પર્વત ઉપર હોય છે. ચાર અંજનગિરિ, એક-એક એવા સોઠ દધિમુખપર્વત, અને બત્તીસ રતિકરપર્વત એમ કુલ મઠીને પર બાવન શાશ્વત જિન ચૈત્યો થયા.

વધુમાં શ્રીનંદીશ્વર દ્વીપના અતિમધ્યભાગે ચાર વિદિશામાં ચાર રતિકરપર્વત છે, આંતરાના બે બે રતિકરપર્વતથી આ રતિકર જુદા છે. તે સર્વે રત્નના બનેલા, ગોઠ દસ હજાર યોજન ઉપર-નીચે વિસ્તારવાળા, એક હજાર યોજન ડુંડા,બસો પચાસ યોજન ભૂમિમાં ઢટાયેલા છે. તેથી જ્ઞાલર (ઘંટા) જેવા છે. તે રતિકર પર્વતોમાં અગ્નિખૂણા અને નૈઋત્યખૂણાના રતિકરની ચારે દિશાએ એક-એક રાજધાની છે. તે બે રતિકરની કુલ આઠ રાજધાનીઓ સૌધર્મેન્દ્રની અને આઠ ઈન્દ્રાણીઓની છે. તે જ રીતે વાયવ્ય અને ઈશાનખૂણાના રતિકરની ચારે દિશાની મઠી કુલ આઠ રાજધાનીઓ ઈશાનેન્દ્રની અને આઠ ઈન્દ્રાણીઓની છે કુલ સોઠ રાજધાની છે. તે દરેક રાજધાનીમાં એક-એક શાશ્વત જિનચૈત્ય છે, તેથી સોઠ શાશ્વત જિનચૈત્યો ઈન્દ્રાણીની રાજધાનીમાં થયા. (મતાંતરે દરેક રતિકરની ચારે દિશામાં એક એકના સ્થાને બે બે રાજધાની ગણતા ચાર રતિકરની કુલ બત્તીસ રાજધાનીઓ થાય અને એટલે કુલ બત્તીસ શાશ્વતજિનચૈત્યો થાય

સર્વ મઠીને બાવન અંજનગિરિ પ્રમુખના સોઠ (ઈન્દ્રાણીની રાજધાનીના) જિનચૈત્યો ભેગા થઈ અઢસઠ ચૈત્યો નંદીશ્વર દ્વીપના થયા (મતાંતરે ઈન્દ્રાણીની રાજધાનીના બત્તીસ જિનચૈત્યો ગણતા કુલ ચૈત્યોની સંખ્યા ચોર્યાસી થઈ અંજનગિરિ વગેરે બાવન શાશ્વત

श्रुतसागर

13

नवम्बर-२०१४

चैत्योमां प्रत्येकमां एकसो चोवीस शाश्वत जिनप्रतिमाजी छे. तेथी बावन जिनचैत्योनी कुल प्रतिमा संख्या छ हजार चारसो अडतालीस थई, ईन्द्राणीनी राजधानीना चैत्योमां प्रत्येकमां एकसो वीस प्रतिमाजी छे तेथी सोळ राजधानीनी जिनप्रतिमा एक हजार नवसो वीस थई, मतांतर मुजब जिनप्रतिमानी संख्या त्रण हजार आठसो चालीस थई प्रस्तुत कृतिमां मात्र उपरोक्त बावन जिनालयोनी स्तवन-पूजा करवामां आवी छे.

आ सिवाय वावडीना नामो, सर्वे जिनचैत्योनुं स्वरूप, तेना द्वारोनुं स्वरूप, जिनभवननी अंदर रहेल मणिपीठिका-प्रतिमा, परिकर, उपकरण विगरेनुं विशद स्वरूप, प्राप्त थाय छे. परंतु विस्तार भयथी अहीं जणाव्युं नथी, विशेष स्वरूप जाणवा माटे. नन्दीश्वरद्वीपस्तव, लोकप्रकाश, क्षेत्रसमासप्रकरण वगैरे ग्रंथोनुं अध्ययन करवुं.

मात्र नन्दीश्वर द्वीपनुं ज वर्णन होय तेवा स्तोत्रो,स्तुतिओ, स्तवनो, पूजाओनी प्राचीन-अर्वाचीन कृतिओनी कुल संख्या प्रायः ५० नी आसपास छे. जेनी नोंध कृतिना अंते अत्ते आपेली छे. भिन्न-भिन्न कर्ताओनी बनावेली प्राकृत, संस्कृत, मारगुर्जर, हिन्दी भाषानिबद्ध 'नन्दीश्वरद्वीप पूजा' करता प्रस्तुतकृति मात्र संस्कृत भाषामां रचायेली होय विशिष्ट छे. वळी अन्य पूजाओमां प्रायः एक साथे समग्र नन्दीश्वरद्वीपना बधा ज जिनालयोनी अष्टप्रकारी पूजा होय छे. ज्यारे प्रस्तुत कृतिमां दरेक दिशानां जिनालयोनी अनुक्रमे अष्टप्रकारी पूजा करी छे. कृति एकंदरे मजानी छे. तेमां इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, उपजाति, अनुष्टुब, वसन्ततिलका प्रमुख गणमेळ छंद अने अन्य मालमेळ छंद कविए प्रयोज्या छे. क्यांक क्यांक तेमां स्वलना थई होय तेवुं जणाय छे. कर्ता तरीके 'आ . श्री रत्नशेखर सूरिजी म.'नुं नाम कृतिमां प्राप्त थाय छे. तेओश्रीना जीवनसंबंधी, गुरुपरंपरा संबंधी कोई माहिति कृतिमां मळती नथी.

श्री सुरेन्द्रनगर जैन संघना ज्ञानभंडारमांथी प्रस्तुतकृति संपादन माटे मळी छे. ते माटे ते श्री संघना वहीवटककर्ताओनो खूब – खूब आभार

प्रान्ते

“चत्वारोऽञ्जन शैलगा दधिमुखोत्तं सश्रियः षोडश,

द्वात्रिंशच्च निदेशतो रतिकरेष्वेवं द्विपञ्चाशत्म् ।

इन्द्राणीवरराजधान्युपगता द्वात्रिंशतोऽमूञ्चतु-

र्युक्ताऽशीतिमहं जिनेन्द्रनिलयान् वन्दे च नन्दीश्वरे ॥”

नन्दीश्वरद्वीपना ते शाश्वतजिनचैत्योमां बिराजमान सर्व शाश्वत जिनबबोने भाव
सभर वंदना

श्रीरत्नशेखरसूरिकृता श्रीनन्दीश्वरद्वीपरिथतजिनभवनपूजा

मुनिश्री सुयशचन्द्रविजय

॥१॥ अथ श्रीनन्दीश्वरद्वीपस्थितजिनभु(भ)वनपूजाप्रारम्भः ॥

श्रीमत्पार्श्वं जिनाधीशं, प्रणम्य परया मुदा ।

वक्ष्ये नन्दीश्वरद्वीप-पूजाक्रममहोत्सवम् ॥१॥

एकैकस्य हि दिग्भागे, त्रयोदश हि पर्वताः।

तत्र प्रत्येकचैत्यं(त्ये) तु, पूजां कुर्वे शिवाप्तये ॥२॥

द्विपञ्चाशन् महीन्द्रेषु, द्वीपञ्चाशज्जिनगृहाः।

गृहे गृहे चतुर्विंशा-धिकं जिनशतं स्थितम् ॥३॥

॥श्रीपूर्वदिग्गताञ्जनगिरिस्थितजिनबिम्बपूजा॥

प्राच्यां दिशि श्रीगिरिञ्जनः स्यात्, तत्र स्थितं श्रीजिनराजवृन्दम्।

चये जलाद्यैः सुरवृन्दवन्द्यं, सदा पवित्रं सुखदं सुगात्रम् ॥

॥ अथाष्टकम् ॥

सद्धेमभृङ्गारविनिर्मितेन(प्रतिष्ठितेन), पवित्रवारा ह्यतिशीतलेन।

नन्दीश्वरे पूर्वगकज्जलाद्रौ, चर्चामि नित्यं भवनाशनाय^१ ॥१॥ जलम् ॥

[ॐ ह्रीं] [श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्स्थिताञ्जनगिरौ [श्री]

जिनबिम्बेभ्यो जलं समर्पयामीति (यजामीति) स्वाहा ॥१॥

सुगन्ध(न्धि)गन्धेन सुचन्दनेन, श्रीखण्डकाशमीरमनोहरेण।

नन्दीश्वरे पूर्वगकज्जलाद्रौ, चर्चामि नित्यं भवनाशनाय ॥२॥ चन्दनम् ॥

[ॐ ह्रीं] [श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्स्थिताञ्जनगिरौ [श्री]

जिनबिम्बेभ्यश्चन्दनं समर्पयामीति (यजामीति) स्वाहा ॥२॥

१. 'भवनाशनाय' पदस्थाने 'जिनराजवृन्दम्' पदं योग्यं स्यात्।

श्रुतसागर

15

नवम्बर-२०१४

अत्युज्ज्वलैः खण्डविवर्जितैश्च, सत्तण्डुलैर्मौक्तिकतुल्यवर्णैः।

नन्दीश्वरे पूर्वगकज्जलाद्रौ, चर्चामि नित्यं भवनाशनाय ॥३॥ अक्षतम् ॥

[ॐ ह्रीं श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्स्थिताञ्जनगिरौ [श्री]

जिनबिम्बेभ्योऽक्षतं समर्पयामीति (यजामीति) स्वाहा ॥३॥

मन्दारपुष्पैः सुमनोहरैश्च, सुवर्णमिश्रैः सरसैः सुमैश्च ।

नन्दीश्वरे पूर्वगकज्जलाद्रौ, चर्चामि नित्यं भवनाशनाय ॥४॥ पुष्पम् ॥

[ॐ ह्रीं श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्स्थिताञ्जनगिरौ [श्री]

जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं समर्पयामीति (यजामीति) स्वाहा ॥४॥

समस्तमिथ्यान्धविनाशदक्षैः (क्षै)-रत्नप्रदीपैर्बहुधाप्रकारैः ।

नन्दीश्वरे पूर्वगकज्जलाद्रौ, चर्चामि नित्यं भवनाशनाय ॥५॥ दीपम् ॥

[ॐ ह्रीं श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्स्थिताञ्जनगिरौ [श्री]

जिनबिम्बेभ्यो दीपं समर्पयामीति (यजामीति) स्वाहा ॥५॥

कृष्णागुरुधूपसमुद्भवेन, धूमेन मेघाधिपमेचकेन ।

नन्दीश्वरे पूर्वगज्जलाद्रौ, चर्चामि नित्यं भवनाशनाय ॥६॥ धूपम् ॥

[ॐ ह्रीं श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्स्थिताञ्जनगिरौ [श्री]

जिनबिम्बेभ्यो धूपं समर्पयामीति (यजामीति) स्वाहा ॥६॥

रसाल-पूगा-ऽऽमल-मोच-निम्बू-द्राक्षाफलैः सर्वफलप्रधानैः।

नन्दीश्वरे पूर्वगकज्जलाद्रौ, चर्चामि नित्यं भवनाशनाय ॥७॥ फलम् ॥

[ॐ ह्रीं श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्स्थिताञ्जनगिरौ [श्री]

जिनबिम्बेभ्यः फलं समर्पयामीति (यजामीति) स्वाहा ॥७॥

अनेकपक्वान्निविधानभूत्यै(तैः), नानारसव्यञ्जनपूरितैश्च।

नन्दीश्वरे पूर्वगकज्जलाद्रौ, चर्चामि नित्यं भवनाशनाय ॥८॥ नैवेद्यम् ॥

[ॐ ह्रीं श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्स्थिताञ्जनगिरौ [श्री]

जिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं समर्पयामीति (यजामीति) स्वाहा ॥८॥

SHRUTSAGAR

16

NOVEMBER-2014

तोयैः सुगन्धैः सुकुसुमा-ऽक्षतौघै-श्चरु-प्रदीपैर्वरधूपधूमैः।

नन्दीश्वरे पूर्वगकज्जलाद्रौ, संचर्चयामि जिनराजपूजाम् (बिम्बम्)॥१॥

ॐ ह्रीं [श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्स्थिताञ्जनगिरौ [श्री]
जिनबिम्बेभ्योऽर्घं यजामीति स्वाहा ॥१॥

॥ इति श्रीपूर्वदिगञ्जनगिरि/स्थितजिनबिम्ब/पूजा ॥

[श्रीपूर्वदिगतदधिमुखचतुष्कस्थितजिनबिम्बपूजा]

पूर्वप्राचीनदिग्भागे, गिरिर्दधिमुखो मतः।

तत्रस्थं श्रीजिनाधीशं, चर्चयामि शिवाप्तये ॥१॥

श्रीपूर्वदिग्सुरवेश[सु]शोभमानो, नाम्ना युतो दधिमुखो गिरिराजतुल्यः।

तत्र स्थितं सुरनतं जिननाथबिम्बं, चर्चाम्यहं सकलकर्मविनाशनार्थम् ॥२॥

श्रीपूर्वस्यां दिशायां च, तृतीयो हि दधिमुखः।

तत्रस्थजिनबिम्बानि, चर्चये पापशात(न्त)ये ॥३॥

तत्र प्राचीदिशायां च, चतुर्थो हि दधिमुखः।

तत्रस्थजिनबिम्बानि, पूजयेऽहं सुखाप्तये ॥४॥

॥ अथाष्टकम् ॥

तीर्थोदकैर्धृतमलैरमलस्वभावैः, शश्वन्नदी-नद-सरोवर-सागरोत्थैः।

प्राचीदिशादधिमुखाद्रिचतुष्ककेऽहं, नन्दीश्वरे त्रिजगतीपतिमर्चयामि ॥१॥

ॐ ह्रीं [श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के [श्री]
जिनबिम्बेभ्यो जलं यजामीति स्वाहा ॥१॥

सच्चन्दनेन घनसारविमिश्रितेन, कस्तु(स्तू)रिकाद्रवयुतेन मनोहरेण।

प्राचीदिशादधिमुखाद्रिचतुष्ककेऽहं, नन्दीश्वरे त्रिजगतीपतिमर्चयामि ॥२॥

ॐ ह्रीं [श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के [श्री]
जिनबिम्बेभ्यश्चन्दनं यजामीति स्वाहा ॥२॥

जाती-जपा-बकुल-चम्पक-पाटलाद्यैः, पुष्पैः सुगन्धिशतपत्र-वराऽरविन्दैः।

प्राचीदिशादधिमुखाद्रिचतुष्ककेऽहं, नन्दीश्वरे त्रिजगतीपतिमर्चयामि ॥३॥

श्रुतसागर

17

नवम्बर-२०१४

ॐ ह्रीं [श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के [श्री]
जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं यजामीति स्वाहा ॥३॥

उद्योतयामि पुरतः जिननायकस्य, दीपं तमःप्रशमनाय शमाम्बुराशेः।
प्राचीदिशादधिमुखाद्रिचतुष्केऽहं, नन्दीश्वरे धुतमदस्य सदोदितस्य ॥४॥

ॐ ह्रीं [श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के [श्री]
जिनबिम्बेभ्यो दीपं यजामीति स्वाहा ॥४॥

कृष्णागुरुप्रपचितं सितया समेतं, कर्पूरपूरसहित(तं) विहितं च धूपम्।
प्राचीदिशादधिमुखाद्रिचतुष्केऽहं, नन्दीश्वरे जिनसमीपमहं करोमि ॥५॥

ॐ ह्रीं [श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के [श्री]
जिनबिम्बेभ्यो धूपं यजामीति स्वाहा ॥५॥

ज्ञानं च दर्शनमथो चरणं विचिन्त्य, पूजात्रयं च पुरतः प्रविधाय भक्त्या।
प्राचीदिशादधिमुखाद्रिचतुष्केऽहं, नन्दीश्वरेऽक्षतगणैः कुरु(यजे) स्वस्तिकं च ॥६॥

ॐ ह्रीं [श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के [श्री]
जिनबिम्बेभ्योऽक्षतं यजामीति स्वाहा ॥६॥

सन्नाभिकेर-पनसा-ऽऽमल-बीजपूरैः, [नानाविधैः सुमधुरैर्बहुभिः फलैश्च] ।
प्राचीदिशादधिमुखाद्रिचतुष्केऽहं, नन्दीश्वरे त्रिजगतीपतिमर्चयामि ॥७॥

ॐ ह्रीं [श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के [श्री]
जिनबिम्बेभ्यः(भ्यो) फलं यजामीति स्वाहा ॥७॥

सन्मोदकै-वर्टक-मण्डक-शालि-दालै(ल)-मुख्यैरसङ्ख्यरसशालिभिरन्न(न्य)भोज्यैः।
प्राचीदिशादधिमुखाद्रिचतुष्केऽहं, नन्दीश्वरे त्रिजगतीपतिमर्चयामि ॥८॥

ॐ ह्रीं [श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के [श्री]
जिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं यजामीति स्वाहा ॥८॥

पयोधारा-त्राया-मलयजरसै-रक्षतचयैः,
प्रसूनैर्नैवेद्यैः प्रमदभरितो(तै)दी(दी)पनिकरैः।
वैर्धूपोद्गारैः फलचयकुशाट्यै(र्यै)श्च रचितं,
विदध्नो(द्यो)ऽर्घं नन्दीश्वरदधिमुखादौ जिनवरान् ॥९॥

SHRUTSAGAR

18

NOVEMBER-2014

ॐ ह्रीं [श्री] नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के [श्री]
जिनबिम्बेभ्योऽर्घं यजामीति स्वाहा ॥१॥

॥ इति श्रीपूर्वदिगाश्रितदधिमुखचतुष्कस्थितजिनबिम्बपूजा ॥
[श्रीपूर्वदिगतरतिकराष्टकस्थितजिनबिम्बपूजा]

त्रिदि(द)शेन्द्रस्य सम्बन्धि-दिशायां यो रतीकरः।

तत्रस्थं श्रीजिनाधीशं, पूजयेऽहं शिवाप्तये ॥१॥

श्रीदेवेन्द्रस्य सम्बन्धि-दिग्मार्गे यो रतीकरः।

तत्रस्थं विश्वरूपं च, पूजयेऽहं जिनाधिपम् ॥२॥

इन्द्राधिष्ठितदिग्भागे, वर्तते यो रतीकरः।

तत्रस्थं पूज्यपादं च, पूजयेऽहं जिनेश्वरम् ॥३॥

श्रीमदिन्द्रस्य सम्बन्धि,-दिशायां यो रतीकरः।

तत्रस्थं श्रीजिनाधीशं, पूजयेऽहं सुखाप्तये ॥४॥

देव-देवस्य दिग्भागे, सुखदोऽस्ति रतीकरः।

तत्रस्थं श्रीजगत्पूज्यं, पूजयामि जिनेश्वरम् ॥५॥

प्राचीनबर्हिदिग्भागे, संस्थितो यो रतीकरः।

तत्रस्थमकलङ्कं च, पूजयामि जिनेश्वरम् ॥६॥

इन्द्राणीपतिदिग्भागे, संस्थितो यो रतीकरः।

तत्रस्थं जिनसूर्यं च, पूजयेऽहं सुखाप्तये ॥७॥

त्रिदशेन्द्रस्य दिग्भागे, विद्यते यो रतीकरः।

तत्रस्थितं(तत्रस्थं) जिनबिम्बं [च], पूजयामि सुभक्तिभाक् ॥८॥

॥ अथाष्टकम् ॥

गङ्गादितीर्थभवनपावनवारिपूरै-स्त्योर्दकैर्धुतमलैर्मुनितुल्यचित्तैः।

प्राचीदिशारतिकराष्टक]चैत्यबिम्बे(म्बान्), नन्दीश्वरे वरगिरौ परिपूजयामि ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितरतिकराष्टकेषु [श्री]
जिनबिम्बेभ्यो जलं यजामीति स्वाहा ॥१॥

श्रुतसागर

19

नवम्बर-२०१४

श्रीचन्दनैः कनकवर्णसुकुङ्कुमाद्यैः, कृष्णागुरुद्रवयुतैर्घनसारमिश्रैः।

प्राचीदिशारतिकराष्ट्र[क]चैत्यबिम्बे(म्बान्), नन्दीश्वरे वरगिरौ परिपूजयामि ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितरतिकराष्ट्रकेषु ।श्री।

जिनबिम्बेभ्यश्चन्दनं यजामीति स्वाहा ॥२॥

हेमाभचम्पक-वराऽम्बुज-केतकीभिः, सत्पारिजातकचयै-र्बकुलादिपुष्पैः।

प्राचीदिशारतिकराष्ट्र[क]चैत्यबिम्बे(म्बान्) नन्दीश्वरे वरगिरौ परिपूजयामि ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितरतिकराष्ट्रकेषु ।श्री।

जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं यजामीति स्वाहा ॥३॥

रत्नादि(भ)सोम-घृतदीपचयैः रघघ्नै-ज्ञानैकहेतुभिरत्नम(लं)प्रहतान्धकारैः।

प्राचीदिशारतिकराष्ट्र[क]चैत्यबिम्बे(म्बान्), नन्दीश्वरे वरगिरौ परिपूजयामि ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितरतिकराष्ट्रकेषु ।श्री।

जिनबिम्बेभ्यो दीपं यजामीति स्वाहा ॥४॥

कृष्णागुरुप्रमुखधूपभरैः सुगन्धैः, कर्मन्धनाग्निभिरहो विविधो[विधिनो]पनीतैः।

प्राचीदिशारतिकराष्ट्र[क]चैत्यबिम्बे(म्बान्), नन्दीश्वरे वरगिरौ परिपूजयामि ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितरतिकराष्ट्रकेषु ।श्री।

जिनबिम्बेभ्यो धूपं यजामीति स्वाहा ॥५॥

स्वल्पैः सुगन्ध(न्धि)कलमाक्षतचारुपुञ्जै-हीरोज्ज्वलैः शुभतरैरिव पुण्यपुञ्जैः।

प्राचीदिशारतिकराष्ट्र[क]चैत्यबिम्बे(म्बान्), नन्दीश्वरे वरगिरौ परिपूजयामि ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितरतिकराष्ट्रकेषु ।श्री।

जिनबिम्बेभ्योऽक्षतं यजामीति स्वाहा ॥६॥

स्वर्गापवर्गसुखदैवैरपक्ववासै-र्नारिङ्ग-निम्बु-पनसा-[ऽऽमलका]-ऽऽमकैर्वा।

प्राचीदिशारतिकराष्ट्र[क]चैत्यबिम्बे(म्बान्), नन्दीश्वरे वरगिरौ परिपूजयामि ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितरतिकराष्ट्रकेषु ।श्री।

जिनबिम्बेभ्यः(भ्यो) फलं यजामीति स्वाहा ॥७॥

SHRUTSAGAR

20

NOVEMBER-2014

शाल्योदनैः सुखकरैर्घृतपूरयुक्तैः, शुद्धैः सदा मधुरमोदक-पायसान्नैः।
प्राचीदिशारतिकराष्ट्र[क]चैत्यबिम्बे(म्बान्), नन्दीश्वरे वरगिरौ परिपूजयामि ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितरतिकराष्ट्रकेषु [श्री]
जिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं यजामीति स्वाहा ॥८॥

वा-गन्धशालि-जसुपुष्पचयैर्मनोज्ञै-नैवेद्य-दीप-वर(फल)-धूपलतादिभिर्वा।
प्राचीदिशारतिकराष्ट्र[क]चैत्यबिम्बे प्रोत्तारयामि वरमर्घमिहाष्टकेऽहम् ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिगाश्रितरतिकराष्ट्रकेषु [श्री]
जिनबिम्बेभ्योऽर्घं यजामीति स्वाहा ॥९॥

॥ इति श्रीपूर्वदिगाश्रितरतिकराष्ट्रकस्थितजिनबिम्बपूजा ॥

पूजाष्टकस्तुतिमिमामसमामधीत्य, योऽनेन चारुविधिना वितनोति पूजाम्।
भुक्त्वा नरामरसुखान्यविखण्डिताक्षः(क्षो) धन्यः स वासमचिराल्लभते शिवेऽपि ॥१॥

॥ इति श्री पूर्वदिगाश्रितत्रयोदशगिरि(स्थित)जिनबिम्बपूजा समाप्ता ॥

[श्रीदक्षिणदिग्गताञ्जनगिरिस्थितजिनबिम्बपूजा]

दक्षिणस्यां दिशि योऽसा-वञ्जनो नाम पर्वतः।
तत्रस्यं जिनबिम्बं च, पूजयामि गुणाप्तये ॥

॥ अथाऽष्टकम् ॥

गङ्गापगातीर्थसुनीरपूरैः, शीतैः सुगन्धैर्घनसारमिश्रैः।
नन्दीश्वरे दक्षिणकज्जलाद्रौ, सम्पूजये श्रीजिनराजबिम्बम् ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्यो जलं यजामीति स्वाहा ॥१॥

श्रीचन्दनैर्गन्धविलुब्धभृङ्गैः, सर्वोत्तमैर्गन्धविलासयुक्तैः।
नन्दीश्वरे दक्षिणकज्जलाद्रौ, सम्पूजये श्रीजिनराजबिम्बम् ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्यश्चन्दनं यजामीति स्वाहा ॥२॥

श्रुतसागर

21

नवम्बर-२०१४

मन्दार-जाती-बकुलादिकुन्दै(पुष्पैः), सौरभ्यरम्यैः शतपत्रपुष्पैः।
नन्दीश्वरे दक्षिणकज्जलाद्रौ, सम्पूजये श्रीजिनराजबिम्बम् ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं यजामीति स्वाहा ॥३॥

विश्वप्रकाशैः कनकावदातै-दीपैश्च कर्पूरमयैर्विशालैः।
नन्दीश्वरे दक्षिणकज्जलाद्रौ, सम्पूजये श्रीजिनराजबिम्बम् ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्यो दीपं यजामीति स्वाहा ॥४॥

कर्पूर-कृष्णागुरु-चन्दनाद्यै-धूपैः सुगन्धैर्वद्रव्ययुक्तैः।
नन्दीश्वरे दक्षिणकज्जलाद्रौ, सम्पूजये श्रीजिनराजबिम्बम् ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्यो धूपं यजामीति स्वाहा ॥५॥

चन्द्रावदातैः सरलैः सुगन्धै-रनिन्द्यपात्रैर्वरशालिपुञ्जैः।
नन्दीश्वरे दक्षिणकज्जलाद्रौ, सम्पूजये श्रीजिनराजबिम्बम् ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्योऽक्षतं यजामीति स्वाहा ॥६॥

खर्जूर-राजादि(द)नि-नालिकेरैः, पूगैः फलैर्मोक्षफलाभिलाषैः(फलेच्छयाऽहम्)।
नन्दीश्वरे दक्षिणकज्जलाद्रौ, सम्पूजये श्रीजिनराजबिम्बम् ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्यः(भ्यो) फलं यजामीति स्वाहा ॥७॥

बाष्पायमानै(सद्गन्धयुक्तै-)-घृतपूरपूरै-नानाविधैः पात्रगतैरसाद्यैः(श्व भोज्यैः)।
नन्दीश्वरे दक्षिणकज्जलाद्रौ, सम्पूजये श्रीजिनराजबिम्बम् ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं यजामीति स्वाहा ॥८॥

जल-गन्धा-ऽक्षत-पुष्पै-नैवेद्यै-दीप-धूप-फलनिकरैः।
नन्दीश्वरदक्षिणकज्जल-गिरिजिनमर्धमिह दद्यात् ॥९॥

SHRUTSAGAR

22

NOVEMBER-2014

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्योऽर्घं यजामीति स्वाहा ॥१॥

॥ इति श्रीदक्षिणदिगञ्जनगिरिस्थितजिनबिम्बपूजा ॥

[श्रीदक्षिणदिगतदधिमुखचतुष्कस्थितजिनबिम्बपूजा]

श्रीमद्दक्षिणदिग्भागे, नाम्ना दधिमुखो गिरिः।

तत्रस्थं श्रीजिनं पद्मै-श्वायेऽहं तद्गुणाप्तये ॥१॥

दक्षिणस्यां दिशायां च(यो), द्वितीयो हि दधिमुखः।

तत्रस्थं श्रीजिनं पद्मै-श्वायेऽहं तद्गुणाप्तये ॥२॥

यमाश्रितदिशायां च(यो), तृतीयो यो दधिमुखः।

तत्रस्थं श्रीजिनाधीशं, चायेऽहं तद्गुणाप्तये ॥३॥

दक्षिणस्यां दिशायां च(यो), चतुर्थो यो दधिमुखः।

तत्रस्थं वीतरागं च, चायेऽहं तद्गुणाप्तये ॥४॥

[ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे याम्यदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यो(भ्यः) पूजां यजामीति स्वाहा ॥]

॥ अथाऽष्टकम् ॥

स्वर्गसिन्धुसमुद्भवेन सुवारिणा मलहारिणा,

हेमकुम्भसमाश्रितेन जरामरणनिवारिणा।

नन्दीश्वरे दक्षिणदिगाश्रितदधिमुखाद्रिचतुष्कके,

जिनराजचरणसरोरुहं संचर्चयामि सुभक्तितः ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे याम्यदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यो जलं यजामीति स्वाहा ॥१॥

चन्दनागुरुमिश्रितेन सुगन्धिनाऽऽतपवा(ना)शिना,

केसरोत्करघर्षितेन सुकर्पूरौघसुवासिना।

नन्दीश्वरे दक्षिणदिगाश्रितदधिमुखाद्रिचतुष्कके,

जिनराजचरणसरोरुहं संचर्चयामि सुभक्तितः ॥२॥

श्रुतसागर

23

नवम्बर-२०१४

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे याम्यदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यश्चन्दनं यजामीति स्वाहा ॥२॥

चम्पका-ऽमलकेतकी-मचकुन्द-जाति-सुचम्पकैः,
पारिजातक-मल्लिका-बकुलो-द्रुमादिप्रसूनकैः
नन्दीश्वरे दक्षिणदिगाश्रितदधिमुखाद्रिचतुष्कके,
जिनराजचरणसरोरुहं संचर्चयामि सुभक्तितः ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे याम्यदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं यजामीति स्वाहा ॥३॥

भासुरैरत्नसञ्चयैस्तिमिरापहैर्मणिदीपकै-
हेमभाजनसंस्थितैर्धनसारयुग्मविनिर्मितैः(?)।
नन्दीश्वरे दक्षिणदिगाश्रितदधिमुखाद्रिचतुष्कके,
जिनराजचरणसरोरुहं संचर्चयामि सुभक्तितः ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे याम्यदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यो दीपं यजामीति स्वाहा ॥४॥

शुद्धधूप-दशाङ्गमिश्रितधूमधूमितदिक्वचयैः,
गन्धिद्रव्यसभव्यनिमि(र्मि)तसञ्चयैरघदाहकैः(?)।
नन्दीश्वरे दक्षिणदिगाश्रितदधिमुखाद्रिचतुष्कके,
जिनराजचरणसरोरुहं संचर्चयामि सुभक्तितः ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे याम्यदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यो धूपं यजामीति स्वाहा ॥५॥

शुद्धशालिसमुद्भवेन मनोज्ञपङ्कजवासिना,
निस्तुषामल-खण्डवर्जित-तण्डुलामलराशिना।
नन्दीश्वरे दक्षिणदिगाश्रितदधिमुखाद्रिचतुष्कके,
जिनराजचरणसरोरुहं संचर्चयामि सुभक्तितः ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे याम्यदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्योऽक्षतं यजामीति स्वाहा ॥६॥

दाडिमाऽऽमल-मोच-पूग-रसाल-द्राक्ष-सदाफलैः,
नी(नि)म्बु-श्रीफल-चिर्भटा-दिक(ऽऽप्रक-)-बीजपूर-लवङ्गकैः।
नन्दीश्वरे दक्षिणदिगाश्रितदधिमुखाद्रिचतुष्के,
जिनराजचरणसरोरुहं संचर्चयामि सुभक्तितः ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे याम्यदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यः(भ्यो) फलं यजामीति स्वाहा ॥७॥

नव्यगव्यसुधारसाश्रितपायसान्-शुभोदनै-
र्व्यञ्जना-ऽमलमोदकै-र्वरमण्डकै-नैवेद्यकैः (बहुभोज्यकैः)।
नन्दीश्वरे दक्षिणदिगाश्रितदधिमुखाद्रिचतुष्के,
जिनराजचरणसरोरुहं संचर्चयामि सुभक्तितः ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे याम्यदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं यजामीति स्वाहा ॥८॥

पयोधारात्राया(?) -मलयजरसै-रक्षतचयैः,
प्रसूनै-नैवेद्यैः प्रमदभरितो(तै)-दीपनिकरैः।
वैर्धूपोद्गारैः फलचय-कुशाढ्यै(द्रव्यै)श्च रचितं,
विदद्योऽर्घं नन्दीश्वरदधिमुखादौ जिनवरान् ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे याम्यदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्योऽर्घं यजामीति स्वाहा ॥९॥

॥ इति श्री दक्षिणदिगात्तदधिमुखचतुष्कस्थितजिनबिम्बपूजा ॥

[श्रीदक्षिणदिगात्तरतिकराष्टकस्थितजिनबिम्बपूजा]

दक्षिणस्यां दिशायां च, रतिकरो हि पर्वतः।
तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥१॥
श्रीमद्दक्षिणदिग्भागे, द्वितीयो रतिकरो गिरिः ।
तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥२॥
दक्षिणस्यां दिशायां यो, रती(ति)करस्तृतीयकः।
तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥३॥

श्रुतसागर

25

नवम्बर-२०१४

तत्र दक्षिणदिग्भागे, चतुर्थो(तुर्यो) रतिकरो गिरिः।

तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयामि सुभक्तितः ॥४॥

कृतान्ताश्रितदिग्भागे, नाम्ना रतिकरो गिरिः।

तत्रस्थित(तान्) जिनवरान् (जिनाधीशान्), पूजयामि सुभक्तितः ॥५॥

श्रीमद् दक्षिणदिग्भागे, नाम्ना षष्ठो रतिकरः।

तत्रस्थित(तान्) जिनेन्द्रांश्च, सुभक्त्या पूजयाम्यहं ॥६॥

दक्षिणस्यां दिशायां हि, सप्तमो यो रतीकरः।

तत्रस्थित(तान्) जिनेशांश्च, दृढभक्त्या प्रपूजये ॥७॥

तत्र दक्षिणदिग्भागे, अष्टमोऽहि रतीकरः।

तत्र संस्थितजिनवरान् (स्थितान् च जैनेन्द्रान्), पूजयामि पवित्रधीः ॥८॥

[ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिगाष्ट(दिगाश्रिताष्ट)रती(ति)करेषु
श्रीजिनबिम्बेभ्यो(भ्यः) पूजां यजामीति स्वाहा ॥]

॥ अथाष्टकम् ॥

मन्दाकिनीजातसुनीरजैश्च-शीताभ्रमोदागतभृङ्गवृन्दैः।

नन्दीश्वरे चाऽष्टरतीकरेषु, यजे जिनेन्द्रान् यमदिग्विभागे ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिगाष्ट(दिगाश्रिताष्ट)रती(ति)करेषु
श्रीजिनबिम्बेभ्यो जलं यजामीति स्वाहा ॥१॥

श्रीचन्दनैश्चन्दनसद्रसैश्च, वरेन्दुयोगाय(?) सुवर्णवर्णैः।

नन्दीश्वरे चाऽष्टरतीकरेषु, यजे जिनेन्द्रान् यमदिग्विभागे ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिगाष्ट(दिगाश्रिताष्ट)रती(ति)करेषु
श्रीजिनबिम्बेभ्यश्चन्दनं यजामीति स्वाहा ॥२॥

सहस्रपर्णैः सितपर्णिकाभिः, कुन्दादिजातैः (पुष्पैः) शुभकेतकीभिः।

नन्दीश्वरे चाऽष्टरतीकरेषु, यजे जिनेन्द्रान् यमदिग्विभागे ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिगाष्ट(दिगाश्रिताष्ट)रती(ति)करेषु
श्रीजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं यजामीति स्वाहा ॥३॥

दशेन्धनैर्दशितविश्वसार्थै-स्तमोविनाशैर्जनरञ्जकैश्च।

नन्दीश्वरे चाऽष्टरतीकरेषु, यजे जिनेन्द्रान् यमदिग्विभागे ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिगाष्ट(दिगाश्रिताष्ट)रती(ति)करेषु
श्रीजिनबिम्बेभ्यो दीपं यजामीति स्वाहा ॥४॥

श्रीखण्ड-कालागुरुधूपधूमै-मोदान्वितैः कर्मविनाशकैश्च।

नन्दीश्वरे चाऽष्टरतीकरेषु, यजे जिनेन्द्रान् यमदिग्विभागे ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिगाष्ट(दिगाश्रिताष्ट)रती(ति)करेषु
श्रीजिनबिम्बेभ्यो धूपं यजामीति स्वाहा ॥५॥

नेन्द्रभोगादिसुशालिजातै-रभङ्गकोट्याकृतपुञ्जकैश्च(?)।

नन्दीश्वरे चाऽष्टरतीकरेषु, यजे जिनेन्द्रान् यमदिग्विभागे ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिगाष्ट(दिगाश्रिताष्ट)रती(ति)करेषु
श्रीजिनबिम्बेभ्योऽक्षतं यजामीति स्वाहा ॥६॥

घोटा(घोण्टा)ऽऽम्र-द्राक्षार्चक(द्रक)-लाङ्गलीभि-रेवारुककारु(?)सुमोचवोचैः।

नन्दीश्वरे चाऽष्टरतीकरेषु, यजे जिनेन्द्रान् यमदिग्विभागे ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिगाष्ट(दिगाश्रिताष्ट)रती(ति)करेषु
श्रीजिनबिम्बेभ्यः(भ्यो) फलं यजामीति स्वाहा ॥७॥

सघो(द्यो?)ष्णपक्वान्नसुशालिदालि(ल)-सद्व्यञ्जनैः सुन्दरमोदकैश्च।

नन्दीश्वरे चाऽष्टरतीकरेषु, यजे जिनेन्द्रान् यमदिग्विभागे ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिगाष्ट(दिगाश्रिताष्ट)रती(ति)करेषु
श्रीजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं यजामीति स्वाहा ॥८॥

वार्गन्धशालि-जसु-पुष्पचयैर्मनोज्ञै-नैवेद्य-दीप-वर-धूप-फलादिभिर्वा।

याम्य(म्या)दिशारतिकराष्टकजैनबिम्बे, प्रोत्तारयामि वरमर्घमिहाऽष्टकेऽहम् ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिगाष्ट(दिगाश्रिताष्ट)रती(ति)करेषु
श्रीजिनबिम्बेभ्योऽर्घं यजामीति स्वाहा ॥९॥

॥ इति श्रीदक्षिणादिगातरतिकराष्टकस्थितजिनबिम्बपूजा ॥

श्रुतसागर

27

नवम्बर-२०१४

पूजाष्टकस्तुतिमिमामसमामधीत्य, योऽनेन चारुविधिना वितनोति पूजाम्।
भुक्त्वा नरामसुखान्यविखण्डिताक्षः(क्षो) धन्यः स वासमचिराल्लभते शिवेऽपि ॥१॥

॥ इति श्री दक्षिणदिगाश्रितत्रयोदशगिरि[स्थित]जिनबिम्बपूजा समाप्ता ॥

[श्रीपश्चिमदिग्गताञ्जनगिरिस्थितजिनबिम्बपूजा]

श्रीमत्पश्चिमदिग्भागे, ह्यञ्जनो हि गिरिर्मतः।

तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयामि शिवाप्तये ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्स्थिताञ्जनगिरौ

श्रीजिनबिम्बेभ्यो(भ्यः) पूजां यजामीति स्वाहा ॥

॥ अथाऽष्टकम् ॥

क्षीरोदधिस्वच्छनीरैः (नीरैः क्षीरोदधिस्वच्छैः), सिताभ्रवरवासितैः।

नन्दीश्वरेऽपरदिग-ञ्जनाद्रौ पूजये जिनान् ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्स्थिताञ्जनगिरौ

श्रीजिनबिम्बेभ्यो जलं यजामीति स्वाहा ॥१॥

नन्दनोद्भवश्रीखण्डैः, केसरादिसुमिश्रितैः (केसरादिसुसंयुतैः)।

नन्दीश्वरेऽपरदिग[ऽपरेदिश्य-]ञ्जनाद्रौ पूजये जिनान् ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्स्थिताञ्जनगिरौ

श्रीजिनबिम्बेभ्यश्चन्दनं यजामीति स्वाहा ॥२॥

कुसुमैर्भृङ्गसंसेव्यै-श्चम्पकादिसुपारिजैः[श्चम्पका-ऽम्बुज-पाटलैः]

नन्दीश्वरेऽपरदिग-ञ्जनाद्रौ पूजये जिनान् ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्स्थिताञ्जनगिरौ

श्रीजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं यजामीति स्वाहा ॥३॥

प्रदीपैर्ध्वस्तध्वान्तौघैः, शिखाभङ्गैः सुज्योतिभिः (?)

नन्दीश्वरेऽपरदिग-ञ्जनाद्रौ पूजये जिनान् ॥४॥

१. 'ऽपरदिग-ञ्जनाद्रौ' इत्यस्य स्थाने 'ऽपरे दिश्य-ञ्जनाद्रौ इति पाठः समुचितः?

SHRUTSAGAR

28

NOVEMBER-2014

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्यो दीपं यजामीति स्वाहा ॥४॥

कृष्णागुर्वादिसंधूपै[सद्भूपै]-र्विश्वसामुखचासकैः(?)
नन्दीश्वरेऽपरदिग-ञ्जनाद्रौ पूजये जिनान् ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्यो धूपं यजामीति स्वाहा ॥५॥

तन्दुलैर्मुक्तसङ्काशै-र्दिव्यैः श्वतैरखण्डितैः।
नन्दीश्वरेऽपरदिग-ञ्जनाद्रौ पूजये जिनान् ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्योऽक्षतं यजामीति स्वाहा ॥६॥

पक्वनारिङ्ग-मोचा-ऽऽम्र-नालिकेरादिसत्फलैः।
नन्दीश्वरेऽपरदिग-ञ्जनाद्रौ पूजये जिनान् ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्यः(भ्यो) फलं यजामीति स्वाहा ॥७॥

नैवेद्यैर्विविधैः सारै-मिष्ट(ष्टैः) भव्यप्रतोषकैः।
नन्दीश्वरेऽपरदिग-ञ्जनाद्रौ पूजये जिनान् ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं यजामीति स्वाहा ॥८॥

अष्टद्रव्यसुसम्पूणै-रर्घैरघविनाशिभिः।
नन्दीश्वरेऽपरदिग-ञ्जनाद्रौ पूजये जिनान् ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्स्थिताञ्जनगिरौ
श्रीजिनबिम्बेभ्योऽर्घं यजामीति स्वाहा ॥९॥

॥ इति पश्चिमदिग्गताञ्जनगिरिस्थितजिनबिम्बपूजा ॥

[श्रीपश्चिमदिग्गतदधिमुखचतुष्कस्थितजिनबिम्बपूजा]

श्रुतसागर

29

नवम्बर-२०१४

पश्चिमायां दिशायां च, नाम्ना दधिमुखो गिरिः।

तत्रस्थान् गतरार्गांश्च, पूजयामि जिनेश्वरान् ॥१॥

वरुणाश्रितदिग्भागे, द्वितीयो यो दधिमुखः।

तत्रस्थान् [श्री]जिनेन्द्रांश्च, पूजयामि सुभक्तितः ॥२॥

पश्चिमायां दिशायां च(यो), तृतीयो यो दधिमुखः।

तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, भक्त्या सम्पूजयाम्यहम् ॥३॥

तत्र पश्चिमदिग्भागे, चतुर्थो यो दधिमुखः।

तत्रस्थित्(तान्) जिनाधीशान्, पूजयामि दृढात्मतः (सुभक्तितः) ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यो(भ्यः) पूजां यजामीति स्वाहा ॥

॥ अथाऽष्टकम् ॥

स्वर्गङ्गतोयैः परमैः पवित्रैः, सच्छीतलैर्हेमघटाश्रितैश्च।

नन्दीश्वरे पश्चिमदिग्गतेषु, दधीमुखेषु प्रभुमर्चयै(ये)ऽहम् ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यो जलं यजामीति स्वाहा ॥१॥

काश्मीर-कर्पूर-सुचन्दनाद्यैः, सुगन्धद्रव्योत्कटपीतवर्णैः।

नन्दीश्वरे पश्चिमदिग्गतेषु, दधीमुखेषु प्रभुमर्चयेऽहम् ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यश्चन्दनं यजामीति स्वाहा ॥२॥

सत्केतकी-जाति-कदम्बपुष्पैः, रलीमद्यैश्चम्पकपारिजातैः।

नन्दीश्वरे पश्चिमदिग्गतेषु, दधीमुखेषु प्रभुमर्चयेऽहम् ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं यजामीति स्वाहा ॥३॥

रत्नप्रभाभासुरभाजनस्थै-हृतान्धकारैर्घनसारदीपैः।

नन्दीश्वरे पश्चिमदिग्गतेषु, दधीमुखेषु प्रभुमर्चयेऽहम् ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यो दीपं यजामीति स्वाहा ॥४॥

दशाङ्गधूपोद्भवधूमजालैः, कृष्णागुरुस्थैर्नवनीरदाभैः।
नन्दीश्वरे पश्चिमदिगतेषु, दधीमुखेषु प्रभुमर्चयेऽहम् ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यो धूपं यजामीति स्वाहा ॥५॥

अखण्डितैः शालिसमुद्भवैश्च, मुक्ताफलौघैरिव वावृषौघैः(तण्डुलौघैः)।
नन्दीश्वरे पश्चिमदिगतेषु, दधीमुखेषु प्रभुमर्चयेऽहम् ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्योऽक्षतं यजामीति स्वाहा ॥६॥

सदाग्र-(मोचा-ऽऽग्र-जम्बीर-सदाफलौघैः, सच्छ्रीफलैः पूग-लविङ्ग-द्राक्षैः)।
नन्दीश्वरे पश्चिमदिगतेषु, दधीमुखेषु प्रभुमर्चयेऽहम् ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यः(भ्यो) फलं यजामीति स्वाहा ॥७॥

सत्पायसानै-र्घनशर्कराद्यै (धृतपूरकैश्च), र्द(द)ध्योदनै-र्व्यञ्जन-सूप-पूपैः।
नन्दीश्वरे पश्चिमदिगतेषु, दधीमुखेषु प्रभुमर्चयेऽहम् ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं यजामीति स्वाहा ॥८॥

नीरादिद्रव्यैर्विशदैस्त्रिशुद्ध्या-प्रोत्तारयामीति विभुं महार्घम्।
(कै-श्वन्दनैः पुष्प-सुदीप-धूपैः, सत्तण्डुलै-रन्न-फलैश्च सर्वैः)
नन्दीश्वरे पश्चिमदिगतेषु, दधीमुखेषु प्रभुमर्चयेऽहम् ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिगाश्रितदधिमुखचतुष्के
श्रीजिनबिम्बेभ्योऽर्घं यजामीति स्वाहा ॥९॥

॥ इति पश्चिमदिगातदधिमुखचतुष्कस्थितजिनबिम्बपूजा ॥

श्रुतसागर

31

नवम्बर-२०१४

[श्रीपश्चिमदिशाश्रितरतिकराष्टकस्थितजिनबिम्बपूजा]

अपरायां दिशायां च, नाम्ना रतिकरोगिरिः।

तत्र स्थितं जिनबिम्बं (जिनेशं च), पूजयामि सुभक्तिभाक् ॥१॥

तत्र दिग् सुरपूज्यश्च, द्वितीयो यो रतीकरः।

तत्र स्थिताज्(न्) जगन्नाथान्, पूजयामि विशुद्धये ॥२॥

पश्चिमायां दिशायां च, तृतीयो यो रतीकरः।

तत्रस्थित(तान्) जिनवरान् (जगन्नाथान्), पूजयामि सुभक्तितः ॥३॥

अपरायां दिशायां च, चतुर्थो यो रतीकरः।

तत्रस्थितं जिनवर्गं (जिनेशं च), पूजयामि दृढात्मतः (विशुद्धये) ॥४॥

अपरेदिग्बिम्बेऽस्मिन्, पञ्चमो यो रतीकरः ।

तत्रस्थित(तान्) जिनेन्द्रांश्च, पूजयामि शिवाप्तये ॥५॥

वारुणीदिशमाश्रित्य, स्थितः षष्ठो रतीकरः।

तत्रस्थित(तान्) जिनेन्द्रांश्च, पूजयामि शिवाप्तये ॥६॥

अपरां दिशि(श)माश्रित्य, सप्तमो यो रतीकरः।

तत्रस्थित(तान्) जिनेन्द्रांश्च, पूजयामि शिवाप्तये ॥७॥

श्रीमत्पश्चिमदिग्भागे, चाऽष्टमो यो रतीकरः।

तत्रस्थित(तान्) जिनेन्द्रांश्च, पूजयामि शिवाप्तये ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपस्थितरती(ति)कराष्टक[अष्टरती(ति)कर]
पर्वताश्रित [श्री] जिनबिम्बेभ्यो(भ्यः) पूजां यजामीति स्वाहा ॥

[ॐ ह्रीं [श्रीनन्दीश्वरद्वीपे] पश्चिमदिगाश्रितरती(ति)कराष्टकेषु
श्रीजिनबिम्बेभ्यो(भ्यः) पूजां यजामीति स्वाहा ॥]

॥ अथाऽष्टकम् ॥

गङ्गादितीर्थभवजीवनधारया च, संच(?)द्विषाऽखिलसुमङ्गलपुण्यमूर्तीन्।

श्रीपश्चिमाश्रितरतीकरभूधरेषु, नन्दीश्वरे जिनवरान् परिपूजयामि ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपस्थितरती(ति)कराष्टक[अष्टरती(ति)कर]
पर्वताश्रित [श्री] जिनबिम्बेभ्यो जलं यजामीति स्वाहा ॥१॥

श्रीचन्दनैः कनकवर्णसुकुङ्कुमाद्यैः, कृष्णागुरुद्रवयुतैर्धनसारमिश्रैः।
श्रीपश्चिमाश्रितरतीकरभूधरेषु, नन्दीश्वरे जिनवरान् परिपूजयामि ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपस्थितरती(ति)कराष्टक[अष्टरती(ति)कर]
पर्वताश्रित [श्री] जिनबिम्बेभ्यश्चन्दनं यजामीति स्वाहा ॥२॥

हेमाभचम्पक-वराऽम्बुज-केतकीभिः, सत्पारिजातकचयैर्बकुलादिपुष्पैः।
श्रीपश्चिमाश्रितरतीकरभूधरेषु, नन्दीश्वरे जिनवरान् परिपूजयामि ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपस्थितरती(ति)कराष्टक[अष्टरती(ति)कर]
पर्वताश्रित [श्री] जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं यजामीति स्वाहा ॥३॥

रत्नादि(भ)सोम(?)घृतदीपतरैरिवाकै-(चयैरघघ्नै-)
ज्ञानैकहेतुभिरलं प्रहतान्धकारैः।

श्रीपश्चिमाश्रितरतीकरभूधरेषु, नन्दीश्वरे जिनवरान् परिपूजयामि ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपस्थितरती(ति)कराष्टक[अष्टरती(ति)कर]
पर्वताश्रित [श्री] जिनबिम्बेभ्यो दीपं यजामीति स्वाहा ॥४॥

कृष्णागुरुप्रमुखधूपभरैः सुगन्धैः, कर्मेन्धनाग्निभिरहो विविधो[विधिनो]पनीतैः।
श्रीपश्चिमाश्रितरतीकरभूधरेषु, नन्दीश्वरे जिनवरान् परिपूजयामि ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपस्थितरती(ति)कराष्टक[अष्टरती(ति)कर]
पर्वताश्रित [श्री] जिनबिम्बेभ्यो धूपं यजामीति स्वाहा ॥५॥

शुभ्रैः सुगन्ध(न्धि)कलमाक्षतचारुपुञ्जै-हीरोज्ज्वलैः सुखकरैरिव चन्द्रपूर्णैः(?)।
श्रीपश्चिमाश्रितरतीकरभूधरेषु, नन्दीश्वरे जिनवरान् परिपूजयामि ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपस्थितरती(ति)कराष्टक[अष्टरती(ति)कर]
पर्वताश्रित [श्री] जिनबिम्बेभ्योऽक्षतं यजामीति स्वाहा ॥६॥

स्वर्गापवर्गफलदैर्वपक्ववासै-नारिङ्ग-निम्बु-कदली-पनसा-ऽऽम्रकैर्वा।
श्रीपश्चिमाश्रितरतीकरभूधरेषु, नन्दीश्वरे जिनवरान् परिपूजयामि ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपस्थितरती(ति)कराष्टक[अष्टरती(ति)कर]
पर्वताश्रित [श्री] जिनबिम्बेभ्यः(भ्यो) फलं यजामीति स्वाहा ॥७॥

श्रुतसागर

33

नवम्बर-२०१४

षड्भीरसैश्च चरुभिर्घृतपूरयुक्तैः, शुद्धैः सुधामधुरमोदक-पायसानैः।

श्रीपश्चिमाश्रितरतीकरभूधरेषु, नन्दीश्वरे जिनवरान् परिपूजयामि ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपस्थितरती(ति)कराष्टक[अष्टरती(ति)कर]
पर्वताश्रित [श्री] जिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं यजामीति स्वाहा ॥८॥

वा-गन्धशालि-जसुपुष्पचयैर्मनोज्ञै-नैवेद्य-दीप-वरधूप-फलादिभिर्वा।

श्रीपश्चिमाश्रितरतीकरभूधरेषु, प्रोत्तारयामि वरमर्घमिहाष्टकेषुऽहम् ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपस्थितरती(ति)कराष्टक[अष्टरती(ति)कर]
पर्वताश्रित [श्री] जिनबिम्बेभ्योऽर्घं यजामीति स्वाहा ॥९॥

॥ इति पश्चिमदिशाश्रितरती(ति)कराष्टकस्थितजिनबिम्बपूजा ॥

पूजाष्टकस्तुतिमिमामसमामधीत्य,

योऽनेन चारुविधिना वितनोति पूजाम्।

भुक्त्वा नरा-ऽमरसुखान्यविखण्डिताक्षः(क्षो)

धन्यः स वासमचिराल्लभते शिवेऽपि ॥१॥

॥ इति श्रीपश्चिमदिशाश्रितत्रयोदशगिरि/स्थित/जिनबिम्बपूजा ॥

[श्रीउत्तरदिग्गताञ्जनगिरिस्थितजिनबिम्बपूजा]

उत्तरस्यां दिशायां च, नाम्ना ह्यञ्जनपर्वतः।

तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयामि शिवासये ॥१॥

ॐ ह्रीं [श्री] नन्दीश्वरद्वीपस्थिताञ्जनगिरिनिष्ठि(ष्ठि)त
जिननाथबिम्बपूजां यजामीति स्वाहा ॥

॥ अथाऽष्टकम् ॥

कनककुम्भभरेण शीतलवारिणा सुखकारिणा,

त्रिदिवि(व)सिन्धुसमुद्भवेन महाघतापनिवारिणा।

उत्तरस्थितकज्जलाद्रिजिनेशपङ्कजसुन्दरे(मुत्तमं),

भक्तिनिर्झरभरितमनसा चर्चये नन्दीश्वरे ॥१॥

ॐ ह्रीं [श्री]नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्गताञ्जनगिरौ [श्री]
जिनबिम्बेभ्यो जलं यजामीति स्वाहा ॥१॥

SHRUTSAGAR

34

NOVEMBER-2014

मलयपर्वतसम्भवागुरु-चन्दनै-घनकुङ्कुमैः,
सु-घनसारविमिश्रितैर्भ्रवप्रबल(तीव्र)तापविनाशनैः।
उत्तरस्थितकज्जलाद्रिजिनेशपङ्कजसुन्दरे(मुत्तमं),
भक्तिनिर्झरभरितमनसा चर्चये नन्दीश्वरे ॥२॥

ॐ ह्रीं |श्री|नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्गताञ्जनगिरौ |श्री|
जिनबिम्बेभ्यश्चन्दनं यजामीति स्वाहा ॥२॥

सरसिसम्भव-पञ्चका(चम्पका)-ऽमलपारिजात-सुहेमकै-
जाति-कुन्द-सुगन्धपूरितदिव्चयैर्भ्रमरप्रियैः।
उत्तरस्थितकज्जलाद्रिजिनेशपङ्कजसुन्दरे(मुत्तमं),
भक्तिनिर्झरभरितमनसा चर्चये नन्दीश्वरे ॥३॥

ॐ ह्रीं |श्री|नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्गताञ्जनगिरौ |श्री|
जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं यजामीति स्वाहा ॥३॥

हेमभाजनमणिनिविद्धसमाश्रितैर्बहुदीपकैः,
सुघनसारविमिश्रितैस्तिमिरापहैर्मणिभासुरैः।
उत्तरस्थितकज्जलाद्रिजिनेशपङ्कजसुन्दरे(मुत्तमं),
भक्तिनिर्झरभरितमनसा चर्चये नन्दीश्वरे ॥४॥

ॐ ह्रीं |श्री|नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्गताञ्जनगिरौ |श्री|
जिनबिम्बेभ्यो दीपं यजामीति स्वाहा ॥४॥

अगुरु-चन्दन-यक्षधूपभरैः सुगन्धसमाश्रितै-
र्भ्रमरपङ्क्ति-नवीनमेघसमानमेचकपूरकैः(वर्णकैः)।
उत्तरस्थितकज्जलाद्रिजिनेशपङ्कजसुन्दरे(मुत्तमं),
भक्तिनिर्झरभरितमनसा चर्चये नन्दीश्वरे ॥५॥

ॐ ह्रीं |श्री|नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्गताञ्जनगिरौ |श्री|
जिनबिम्बेभ्यो धूपं यजामीति स्वाहा ॥५॥

१. प्रथमचरणस्थाने - 'रत्नटङ्कितहेमभाजनमाश्रितैर्बहुसङ्ख्यकैः' पाठः चिन्त्यः।

श्रुतसागर

35

नवम्बर-२०१४

मौक्तिकामलबहुलतन्दुलकमल(पद्म)वाससुवासितैः^१
 रुभयकोशसमानखण्डितवर्जितैः सरलाक्षतैः।
 उत्तरस्थितकज्जलाद्रिजिनेशपङ्कजसुन्दरे[मुत्तमं],
 भक्तिनिर्झरभरितमनसा चर्चये नन्दीश्वरे ॥६॥

ॐ ह्रीं |श्री|नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्गताञ्जनगिरौ |श्री|
 जिनबिम्बेभ्योऽक्षतं यजामीति स्वाहा ॥६॥

पनस-दाडिम-पूग-श्रीफल-मातुलिङ्ग-सदाफलैः-
 मोंच-निम्बु-रसाल-चिर्भटप्रमुखसत्फलसञ्चयैः।
 उत्तरस्थितकज्जलाद्रिजिनेशपङ्कजसुन्दरे[मुत्तमं],
 भक्तिनिर्झरभरितमनसा चर्चये नन्दीश्वरे ॥७॥

ॐ ह्रीं |श्री|नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्गताञ्जनगिरौ |श्री|
 जिनबिम्बेभ्यः(भ्यो) फलं यजामीति स्वाहा ॥७॥

विशदपायस-शर्करान्वितमोदकैर्घृतपाचितैः,
 सरसव्यञ्जननव्य-गव्यशुभोदनैश्च चरूतमैः।
 उत्तरस्थितकज्जलाद्रिजिनेशपङ्कजसुन्दरे[मुत्तमं],
 भक्तिनिर्झरभरितमनसा चर्चये नन्दीश्वरे ॥८॥

ॐ ह्रीं |श्री|नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्गताञ्जनगिरौ |श्री|
 जिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं यजामीति स्वाहा ॥८॥

नैर(जलै)-गन्धै-श्रम्पकै-श्याऽक्षतैश्च, हव्यै-दीपै-धूपकैः सत्फलौघैः।
 अर्घ्यं चाये कज्जलाद्रौ ह्युदीच्यां, नन्दीद्वीपे शाश्वतान् जिनवरेन्द्रान् (श्रीजिनेशान्) ॥९॥

ॐ ह्रीं |श्री|नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्गताञ्जनगिरौ |श्री|
 जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं यजामीति स्वाहा ॥९॥

॥ इति श्रीउत्तरदिग्गताञ्जनगिरिस्थितजिनबिम्बपूजा ॥

१. चरणद्वयस्य स्थाने 'मौक्तिकामल-खण्डवर्जित-पद्मवाससुवासितैः,

जिनपपूजनयोग्यकैरथ तण्डुलैर्बहुसङ्ख्यकै' इति चरणयुगलं चिन्त्यम्।

२. चरणद्वयस्थाने - 'वटक-मण्डक-मोदकै-घृतपूर-पायस-पूपकैः,

सरसव्यञ्जन-तण्डुलैर्वरसर्वभव्य-प्रतोषकैः' इति पाठः चिन्त्यः।

[श्री उत्तरदिशाश्रितदधिमुखचतुष्कस्थितजिनबिम्बपूजा]

श्रीमदुत्तरदिग्भागे, नाम्ना दधिमुखो गिरिः।
 तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥१॥
 उदीच्यां च दिशायां च(यो), द्वितीयो हि दधिमुखः।
 तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥२॥
 उत्तरायां दिशायां च(यो), तृतीयश्च दधिमुखः।
 तत्रस्थितान् जिनाधीशान् पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥३॥
 उत्तरस्यां दिशि ख्यातो, नाम्ना चतुर्थश्च दधिमुखः।
 तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशाधिष्ठितदधिमुखचतुष्के
 जिनपूजां यजामीति स्वाहा ॥

॥ अथाऽष्टकम् ॥

क्षीरनीर-हीर-तीर-गौरवारिधारया-
 ऽमन्दकुन्द-चन्दनादिसौरभेण सारया।
 दधीमुखे चतुष्कके जिनेन्द्रपादपङ्कजे,
 प्रपूजयामि नन्दिनाम्नि सौख्यधाम्नि चाऽष्टमे ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरे(नन्दीश्वरद्वीपे) [उत्तरदिग्गत]दधिमुखचतुष्के
 [श्री] जिनबिम्बेभ्यो जलं यजामीति स्वाहा ॥१॥

अर्कतर्कवर्जनै(?)रनर्घचन्दनद्रवैः,
 कुङ्कुमादिमिश्रितैरनल्पषट्पदाश्रितैः।
 दधीमुखे चतुष्कके जिनेन्द्रपादपङ्कजे,
 प्रपूजयामि नन्दिनाम्नि सौख्यधाम्नि चाऽष्टमे ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरे(नन्दीश्वरद्वीपे) [उत्तरदिग्गत]दधिमुखचतुष्के
 [श्री] जिनबिम्बेभ्यश्चन्दनं यजामीति स्वाहा ॥२॥

पारिजात-वारिसुत-कुन्द-हेमकेतकी,
 मालती-सुचम्पकादिसारपुष्पमालया।
 दधीमुखे चतुष्कके जिनेन्द्रपादपङ्कजे,
 प्रपूजयामि नन्दिनाम्नि सौख्यधाम्नि चाऽष्टमे ॥३॥

श्रुतसागर

37

नवम्बर-२०१४

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरे(नन्दीश्वरद्वीपे) [उत्तरदिग्गत]दधिमुखचतुष्के
[श्री] जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं यजामीति स्वाहा ॥३॥

रत्न-सौ(सो)म-सर्पिषादि(?)दीपकैः कृतोज्ज्वलै-
र्वातघाततोप(घातजात)कोपकम्परूपवर्जितैः।
दधीमुखे चतुष्कके जिनेन्द्रपादपङ्कजे,
प्रपूजयामि नन्दिनाम्नि सौख्यधाम्नि चाऽष्टमे ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरे(नन्दीश्वरद्वीपे) [उत्तरदिग्गत]दधिमुखचतुष्के
[श्री] जिनबिम्बेभ्यां दीपं यजामीति स्वाहा ॥४॥

सिह्नि(ह्)का-ऽसिताऽगुरु-द्रधूपकैरलंश्रितै-
र्वानमानवर्द्धमानमानिनीमनोहरैः(?)।
दधीमुखे चतुष्कके जिनेन्द्रपादपङ्कजे,
प्रपूजयामि नन्दिनाम्नि सौख्यधाम्नि चाऽष्टमे ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरे(नन्दीश्वरद्वीपे) [उत्तरदिग्गत]दधिमुखचतुष्के
[श्री] जिनबिम्बेभ्यो धूपं यजामीति स्वाहा ॥५॥

औषधेन-सिन्धुफेन-हारभासमुज्ज्वलै
रक्षतैः सुलक्षितैरजौत(घ)-खण्डवर्जितैः।
दधीमुखे चतुष्कके जिनेन्द्रपादपङ्कजे,
प्रपूजयामि नन्दिनाम्नि सौख्यधाम्नि चाऽष्टमे ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरे(नन्दीश्वरद्वीपे) [उत्तरदिग्गत]दधिमुखचतुष्के
[श्री] जिनबिम्बेभ्योऽक्षतं यजामीति स्वाहा ॥६॥

श्रीफला-ऽऽम्र-कर्कटी-सुदाडिमादिभिः फलै-
र्वर्णमिष्टसौरभादि(रिष्टवर्ण-सौरभेण) चक्षुरादिमोदनैः।
दधीमुखे चतुष्कके जिनेन्द्रपादपङ्कजे,
प्रपूजयामि नन्दिनाम्नि सौख्यधाम्नि चाऽष्टमे ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरे(नन्दीश्वरद्वीपे) [उत्तरदिग्गत]दधिमुखचतुष्के [श्री]
जिनबिम्बेभ्यः(भ्यो) फलं यजामीति स्वाहा ॥७॥

SHRUTSAGAR

38

NOVEMBER-2014

व्यञ्जनेन पायसादिभिः समं च षड् रसै-
मोदको(कौ)दनादिभिः सुवर्णभाजनस्थितैः।
दधीमुखे चतुष्कके जिनेन्द्रपादपङ्कजे,
प्रपूजयामि नन्दिनाम्नि सौख्यधाम्नि चाऽष्टमे ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरे..... [श्री] जिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं
यजामीति स्वाहा ॥८॥

जीवना-ऽसितागुरु-प्रवाक्षतैः प्रसूनकैः-
श्वारुवत् प्रदीप-धूपरूपधूमसत्फलैः।
दधीमुखे चतुष्कके जिनेन्द्रपादपङ्कजे,
द्वीपके सुनन्दिनाम्नि सन्दधेऽर्घमर्हते ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरे(नन्दीश्वरद्वीपे) [उत्तरदिग्गत]दधिमुखचतुष्के [श्री] जिनबिम्बेभ्योऽर्घं
प्रोत्तारयामीति स्वाहा ॥९॥

॥ इति उत्तरदिशाश्रितदधिमुखचतुष्कस्थितजिनबिम्बपूजा ॥

[श्रीउत्तरदिगाश्रितरतिकराष्टकस्थितजिनबिम्बपूजा]

उत्तरस्यां दिशायां च, नाम्ना रतिकरो गिरिः।
तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयेऽहं सुखाप्तये ॥१॥

उदीच्यां दिशि (उत्तरदिश)माश्रित्य, द्वितीयो रतिकरः स्थितः।
तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान् पूजयेऽहं सुखाप्तये ॥२॥

उत्तरदिग्विभागेऽस्मिन्, तृतीयो यो रतिकरः।
तत्रस्थितान् जिनाधीशान्, पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥३॥

धनदस्य दिशायां च, चतुर्थो यो रतिकरः।
तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥४॥

उत्तरायां दिशायां च, पञ्चमो रतिकरो मतः।
तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥५॥

१. चरणद्वयस्थाने - 'पायसान्न-पूप-सूप-मोदकादिभोज्यकैः-

व्यञ्जनादियुक्तकै सुवर्णभाजनस्थितैः' इति पदयुगं योग्यम्।

२. अत्र चरणे 'सुनन्दिनाम्नि द्वीपके ददेऽहमर्घमर्हते' इति पाठः योज्यः।

श्रुतसागर

39

नवम्बर-२०१४

उदीच्यां च(उत्तरायां) दिशायां च (हि), षष्ठो रतिकराचलः।

तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥६॥

उत्तरायां(उत्तरे हि)दिशाभागे, सप्तमो यो रतीकरः।

तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥७॥

उत्तरदिग् स(दिश)माश्रित्या-ऽष्टमो रतिकराचलः।

तत्रस्थित(तान्) जिनाधीशान्, पूजयेऽहं गुणाप्तये ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशाश्रितरती(ति)कराष्टके ।श्री।
जिनबिम्बं [बिम्बेभ्यः] पूजां यजामीति स्वाहा ॥

॥ अथाऽष्टकम् ॥

कुन्द-मौक्तिके-न्दुकौमुदी-तुषारभासुरैः,

स्वादु-शीत-पुष्प-चन्द्रवासितान्तरैर्जलैः ।

द्वीपनन्दिनामनीह चाऽष्टके रतीकरे,

पूजयामि शाश्वतान् जिनेश्वरान् सुभक्तितः ॥१॥

ॐ ह्रीं ।श्री।नन्दीश्वरद्वीपे उत्तर।दिशाश्रित।रती(ति)कराष्टके ।श्री।
जिनबिम्बेभ्यो जलं यजामीति स्वाहा ॥१॥

कुङ्कुमाङ्कितैर्वेन्दुवृन्दमिश्रितैः परै-

श्वन्दनैर्निवारिताखिलाप(घ)तापस(श)ङ्करैः।

द्वीपनन्दिनामनीह चाऽष्टके रतीकरे,

पूजयामि शाश्वतान् जिनेश्वरान् सुभक्तितः ॥२॥

ॐ ह्रीं ।श्री।नन्दीश्वरद्वीपे उत्तर।दिशाश्रित।रती(ति)कराष्टके ।श्री।
जिनबिम्बेभ्यश्चन्दनं यजामीति स्वाहा ॥२॥

हेमपुष्प-केतकी-कजैः सुगन्धशीतलैः (संयुतैः),

पुष्पबाणचारणैः सुगन्ध(पौरनल्प.) पुष्पकैर्वैः।

द्वीपनन्दिनामनीह चाऽष्टके रतीकरे,

पूजयामि शाश्वतान् जिनेश्वरान् सुभक्तितः ॥३॥

१. अत्र चरणे 'स्वादु-शीतलैर्जलैः सुपुष्प-चन्द्रवासितैः' इति पाठः योज्यः।

ॐ ह्रीं [श्री]नन्दीश्वरद्वीपे उत्तर[दिशाश्रित]रती(ति)कराष्टके [श्री]
जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं यजामीति स्वाहा ॥३॥

वित्त्विषान्धकारनाशनायबोधिनायजे
राज्यरत्नदीपकैर्निशान्धकारनाशनैः।
द्वीपनन्दिनामनीह चाऽष्टके रतीकरे
पूजयामि शाश्वतान् जिनेश्वरान् सुभक्तितः ॥४॥

ॐ ह्रीं [श्री]नन्दीश्वरद्वीपे उत्तर[दिशाश्रित]रती(ति)कराष्टके [श्री]
जिनबिम्बेभ्यो दीपं यजामीति स्वाहा ॥४॥

वासनाऽऽगतद्विरेफनीलितान्तरिक्षकैः-
श्वन्दनोद्भवैः समं सुगन्ध(न्धि)धूप-सिंहकैः।
द्वीपनन्दिनामनीह चाऽष्टके रतीकरे,
पूजयामि शाश्वतान् जिनेश्वरान् सुभक्तितः ॥५॥

ॐ ह्रीं [श्री]नन्दीश्वरद्वीपे उत्तर[दिशाश्रित]रती(ति)कराष्टके [श्री]
जिनबिम्बेभ्यो धूपं यजामीति स्वाहा ॥५॥

पुण्यपुञ्जकैरिवाक्षतै[वै]रखण्डितै-
रिन्दुकान्ति-नीरनाथफेनभासुनिर्मलैः।
द्वीपनन्दिनामनीह चाऽष्टके रतीकरे,
पूजयामि शाश्वतान् जिनेश्वरान् सुभक्तितः ॥६॥

ॐ ह्रीं [श्री]नन्दीश्वरद्वीपे उत्तर[दिशाश्रित]रती(ति)कराष्टके [श्री]
जिनबिम्बेभ्योऽक्षतं यजामीति स्वाहा ॥६॥

घोट(घोण्ट)-लाङ्गलीफलैः सुबीजपूर-निम्बुकै-
रंशुमत्फला-ऽऽम्रकैरभीष्टदानदक्षकैः।
द्वीपनन्दिनामनीह चाऽष्टके रतीकरे,
पूजयामि शाश्वतान् जिनेश्वरान् सुभक्तितः ॥७॥

ॐ ह्रीं [श्री]नन्दीश्वरद्वीपे उत्तर[दिशाश्रित]रती(ति)कराष्टके [श्री]
जिनबिम्बेभ्यः(भ्यो) फलं यजामीति स्वाहा ॥७॥

श्रुतसागर

41

नवम्बर-२०१४

पायसैः सुशर्करा-घृताङ्कि(न्वि)तैश्चरूतमै-
 भूमिपात्रैरोपितैः कलादिशुद्धनिर्मितैः-
 द्वीपनन्दिनामनीह चाऽष्टके रतीकरे,
 पूजयामि शाश्वतान् जिनेश्वरान् सुभक्तितः ॥८॥

ॐ ह्रीं [श्री]नन्दीश्वरद्वीपे उत्तर[दिशाश्रित]रती(ति)कराष्टके [श्री]
 जिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं यजामीति स्वाहा ॥८॥

नीर-गन्धना-ऽक्षतैः सपुष्पकैः सुदीपकै-
 श्वारूप[भोज्य]-सत्फलैः सधूपकैः जिनाऽर्घकम् (सुगन्धिभिः) ।
 द्वीपनन्दिनामनीह चाऽष्टके रतीकरे,
 पूजयामि शाश्वतान् जिनेश्वरान् सुभक्तितः ॥९॥

ॐ ह्रीं [श्री]नन्दीश्वरद्वीपे उत्तर[दिशाश्रित]रती(ति)कराष्टके [श्री]
 जिनबिम्बेभ्योऽर्घं यजामीति स्वाहा ॥९॥

॥ इति उत्तरदिगाश्रितरतिकराष्टकस्थितजिनबिम्बपूजा ॥

पूजाष्टकस्तुतिमिमामसमामधीत्य,
 योऽनेन चारुविधिना वितनोति पूजाम्।
 भुक्त्वा नराऽमरसुखान्यविखण्डिताक्षः(क्षो),
 धन्यः स वासमचिराल्लभते शिवेऽपि ॥

॥ इति श्रीउत्तरदिशाश्रितत्रयोदशगिरिस्थितजिनबिम्बपूजा ॥

भक्त्या श्रीजिनचैत्यानां, कुर्वन्तो(न्तः) चन्दनार्चनम्(पूजनार्चने)
 नन्दीश्वरस्तुति-स्तोत्र-पाठपावितमानसाः ॥१॥

भव्या नन्दीश्वर(रं) द्वीप-मेवमाराधयन्ति ये।
 तेऽर्जयन्त्याऽऽर्जवोपेताः, श्रेयसीं शाश्वतीं श्रियम् ॥२॥ [युग्मम्]

इत्थं व्यावर्णितरूपं(चोक्तस्वरूपं श्री-), द्वीपं नन्दीश्वराभिधम्।
 तिष्ठन्त्या(त्या)ऽऽवेष्ट्य परितो, नन्दीश्वरोदवारिधिः ॥३॥

रत्नशेखरसूरिश्च, वदत्येवं जिनाधिपान्।
 कुर्वन्त्यभ्यर्चनं भव्या[व्याः], प्राप्नुवन्ति परं पदम् ॥४॥

॥ इति नन्दीश्वरद्वीपजिनबिम्बपूजा समाप्ता ॥

१. अत्र चरणे 'मृत् सुपात्रसंस्थितैर्नन्द्रभोगयोग्यकैः' इति पाठः योज्यः।

नन्दीश्वरद्वीप संबंधी कृति सूचि

अनु.	कृति नाम	भाषा	कर्ता	'आदिवाक्य	वर्ष	छंद	अध्याय
१	नन्दीश्वर तप	गु.	अज्ञात	-	-	-	-
२	नन्दीश्वर पंचपरमेषु स्तोत्र	सं.	अज्ञात	-	-	१३	-
३	नन्दीश्वर स्तुति	सं.	अज्ञात	सजयति सतामीशः शांतियद जिनतामरः	-	४	-
४	नन्दीश्वरजिन स्तवन	मा.गु.	अज्ञात जैनश्रमण	नन्दीश्वर जिनधामनी शोभा सारी हारे बिंब रतनमयी वीतरागी	-	५	-
५	नन्दीश्वरतीर्थ स्तोत्र	सं.	अज्ञात जैनश्रमण	सुमेरुथुगे कृत जैनजन्माभिषेक कृत्या	-	९	-
६	नन्दीश्वरद्वीप पूजा	पुहिं.सं.	अज्ञात जैनश्रमण	यहूकर दीपसु मध्य भाग भुमे सही मानषोलगिर बलाकार कंचनमई	-	-	-
७	नन्दीश्वरद्वीप ५२ जिनप्रसाद स्तवन	मा.गु.	शिवचंद्र	स्वस्ति श्रीसुखकरण घनविघनहरण जयकार अश्वसेन	वि. १८७७	-	-
८	नन्दीश्वरद्वीप ५२ जिनालय अष्टाह्निकामहोच्छव पूजा	मा.गु.	खिमाविजय	ॐ ह्रीं नन्दीश्वर वरदिवे द्वापंचासजिनालये	वि. १८८२	-	-
९	नन्दीश्वरद्वीप अष्टप्रकारी पूजा	सं.	अज्ञात जैनश्रमण	नन्दीजलं केशवनारिकेतुर्नगाह्वयोनान गारिसूनुः	-	-	-

श्रुतसागर

43

नवम्बर-२०१४

अनु.	कृति नाम	भाषा	कर्ता	आदिवाक्य	वर्ष	छंद	अध्याय
१०	नंदीश्वरद्वीप कल्प	सं.	जिनप्रभसूरि	आराध्य श्रीजिनाधीशान् सुराधीशार्चितक्रमान्	वि. १४वी	४८	-
११	नंदीश्वरद्वीप जिनप्रतिमा स्तुति	सं.	अज्ञात जैनश्रमण	अनाद्यनताघटितानि केन प्रतिष्ठिता केन च	-	४	-
१२	नंदीश्वरद्वीप जिनप्रतिमा स्तुति	मा.गु.	भैया	वंदो श्री जिनदेवको अरु वंदो जिनवैन	-	१५	-
१३	नंदीश्वरद्वीप जिनालयपूजा	मा.गु.	रूपविजय	चिदानंद पूरणकला विघनहरण सुखसिंधु	वि. १८७९	-	ढा.-८
१४	नंदीश्वरद्वीप तीर्थपूजा	सं.,गु.	गुणसागरसूरि	-	-	-	-
१५	नंदीश्वरद्वीप पूजा	मा.गु.	धर्मचंद्र	प्रणमु शांति जिणंदने चउद रयणपति जेह कंचनवरणें	वि. १८९६	-	ढा.-१२
१६	नंदीश्वरद्वीप पूजा	हिं.	वल्लभविजय	वंदी वीर जिणंदको, आनंद सुगुरु पसाय	वि. १९६८	-	ढा.-११
१७	नंदीश्वरद्वीप पूजा	पुहिं.	द्यानतराय	सरब परब में बड़ अठाई परब है	वि. १८वी	२२	-
१८	नंदीश्वरद्वीप विचार	मा.गु.	अज्ञात जैनश्रमण	पूर्व दिसइ दिव रमणि अंजनगिरि	-	-	-
१९	नंदीश्वरद्वीप स्तवन	मा.गु.	अज्ञात जैनश्रमण	लण चोमासीने संवत्सरी जन्म दिख्या	-	९	-

अनु.	कृति नाम	भाषा	कर्ता	आदिवाक्य	वर्ष	छंद	अध्याय
२०	नंदीश्वरद्वीप स्तवन	मा.गु.	जैनचंद्र	नंदीसर बावन जिनालये शाश्वता चौमुख सोहे रे	-	१५	-
२१	नंदीश्वरद्वीप स्तवन	मा.गु.	हेमहंस गणि	नंदीसरदीविहि मणहराई सासय जे	-	६	-
२२	नंदीश्वरद्वीप स्तवन	सं.	शीलशेखर गणि	नंदीसरवरदीवमझारे सासयजिणभवणेसुजुहारे	-	८	-
२३	नंदीश्वरद्वीप स्तुति	सं.	अज्ञात	-	-	४	-
२४	नंदीश्वरद्वीप स्तुति	सं.	अज्ञात जैनश्रमण	-	-	४	-
२५	नंदीश्वरद्वीप स्तुति	मा.गु.	जैनचंद्र	आज चलो सखी वंदण जईये नंदीसर बावन्न जिनालय शाश्वता	-	१५	-
२६	नंदीश्वरद्वीप स्तुति	सं.	अज्ञात जैनश्रमण	नंदीश्वरद्वीप महीपरत्रा लंकारहारा जिनचैत्यवारा:	-	१	-
२७	नंदीश्वरद्वीप स्तुति	मा.गु.	लालविजय	नंदीसर वरद्वीप नीहालुं बावन जिना चोमुख जुहारं	-	४	-
२८	नंदीश्वरद्वीप स्तुति	प्रा.	अज्ञात जैनश्रमण	भुवणपयडवीवे तम्मि नंदीसरम्मी दहिमुह रुइयगारा	-	४	-

श्रुतसागर

45

नवम्बर-२०१४

अनु.	कृति नाम	भाषा	कर्ता	आदिवाक्य	वर्ष	छंद	अध्याय
२९	नंदीश्वरद्वीप स्तुति	सं.	अज्ञात जैनश्रमण	लसद्विपंचाशदधीश्वरालयैर्विराजिते	-	१	-
३०	नंदीश्वरद्वीप स्तुति	गु.	सहजविमल	वर नंदीश्वरद्वीप सोहामणुं	-	४	-
३१	नंदीश्वरद्वीप स्तोत्र	प्रा.	जिनवल्लभ	वंदिय नंदियलोअं जिणविसरं विमलकेवलालोवं	-	२५	-
३२	नंदीश्वरद्वीप स्तोत्र	अप., मा. गु.	मेरु	सिरि निलय जंबुदीवो य लवणाये धायइसंड कालीयपुक्ख	-	२५	-
३३	नंदीश्वरद्वीप स्तोत्र-(सं.)टीका	सं.	साधुसोम	वंदित्वा प्रणम्य किंकर्मतांत्रं जिन विसरं जिन समूहं	-	-	-
३४	नंदीश्वरद्वीपजयमाल	हिं.	भैया	-	-	१६	-
३५	नंदीश्वरद्वीपजिन स्तुति	मा. गु.	अज्ञात जैनश्रमण	नंदिसर वरद्वीप संभारं बावना चोमुख जिनवर	-	४	-
३६	नंदीश्वरद्वीपजिनस्तुति	प्रा.	अज्ञात	निज्जिय दुज्जय पंचबाण	-	-	-
३७	नंदीश्वरद्वीपपूजा विधि	हिं.	अज्ञात	-	-	-	-
३८	नंदीश्वरद्वीपस्तुति	प्रा.	अज्ञात	दीवमि नंदीसरनामगमिबवन्नपासाय मनोहरमि	-	४	-
३९	नंदीश्वरद्वीपस्तुति	गु.	प्रमोदरुचि	नंदीश्वरद्वीपे शाश्वता जिनवर चार	-	४	-

अनु.	कृति नाम	भाषा	कर्ता	आदिवाक्य	वर्ष	छंद	अध्याय
४०	नंदीश्वरपंक्ति विधान	सं.	अज्ञात जैनश्रमण	जिनान् नत्वा जगन्नाथान् कर्मघ्नान् धर्मनायकान्	-	५१	-
४१	नंदीश्वरविचार	प्रा.	अज्ञात	नंदीसरवरस्स बहमज्झदेसे चउद्धिसिं चत्तारि अंजणगपव्वया	-	-	-
४२	नंदीश्वरस्तवन	अप.	अज्ञात	-	-	११	-
४३	नंदीश्वरस्तुति	सं.	अज्ञात	-	-	४	-
४४	नंदीश्वरस्तोत्र	प्रा.	मानतुंगसूरि	कल्लाणयदिणेसु सव्वेसु वि	-	१०	-
४५	नंदीश्वरादिस्तुति	सं.	अज्ञात जैनश्रमण	नंदीश्वरद्वीपमितैर्जिनानां प्रासाद	वि. १६वी	८	-
४६	शाश्वतजिन नंदीश्वरद्वीप स्तवन	मा.गु.	अज्ञात जैनश्रमण	नंदीसरवर दीप मझारि सासतां तीरथ जुहारि	-	११	-

योगनिष्ठ आचार्यश्री बुद्धिसागरजी कृत 'आत्मदर्शन' अने 'आत्मतत्त्व दर्शन' - ग्रंथो विशेषे थोडुंक

कनुभाई ल. शाह

आत्मदर्शन : पृ. १२

ज्ञान अनंत छे. तेना प्रकार अनंत छे. मानवी पोतानी टूकी जिंदगीमां सर्व ज्ञान प्राप्त करी शके नहि. तेथी सर्व ज्ञानना पायारूप अने साररूप तत्त्वज्ञान प्राप्त करवा संबंधी मनुष्ये विचारणा करी लेवी जोईए. चेतन-अचेतननो भेद समजवा माटे तत्त्वज्ञाननो सहारो लेवो जोईए. मनुष्यमां रहलुं आत्मतत्त्व सर्व तत्त्वोमां महान होइ एमनी जाणकारी मेळववा पुरुषार्थ आदरवो जोईए. प्राचीन काळथी आत्मतत्त्वनुं स्वरूप जाणवा मनुष्यो प्रयत्न करी रह्या छे. केटलाक ते पाय्या छे, केटलाक अधूरा रह्या छे अने केटलाक नथी पण पाय्या. कोइ कोइ दृष्टाओ पोतानुं ज्ञान अन्यने माटे मूकता गया छे. श्रीमद् पोते तत्त्वज्ञाननो अनुभव करवा मथ्या. पोताना अनुभवे मेळवेली तत्त्वज्ञाननी अनुभवगम्य छाप पोतानां पुस्तकोमां मूकता गया छे. तत्त्वज्ञान अध्यात्मना ग्रंथोमां तत्त्वनी चर्चा तेओए करी छे. परमात्मा दर्शन तेओए कर्युं छे ते तेमणे तेमना तत्त्वज्ञानना ग्रंथोमां भिन्न-भिन्न शैलीथी समजावटनुं कार्य कर्युं छे.

मुनिराज अध्यात्मज्ञानी आत्मोपयोगी श्री मणिचन्द्रजी महाराजे एकवीश सज्जायोनी रचना करेली तेना पर वि. सं. १९८०ना पेथापुरना चातुर्मास दरमियान विवेचन लखी आ ग्रंथ वि. सं. १९८१मां महुडीथी प्रकाशित थयो छे.

श्री मणिचन्द्रजी महाराज श्वेताम्बर तपागच्छीय श्वेत वस्त्रधारी आत्मार्थी आत्मज्ञानी महासंत हता. तेमने रक्तपित्तनो महारोग थयो हतो. तेओ अध्यात्मज्ञानी होई स्वभावे रोगने सही आत्मपयोगे सहज समाधिमां लीन रहेता हता. पू. मणिचंद्रजी महाराज दोढसो वर्ष पूर्वे थई गया. श्रीमदे एमनी एकवीश सज्जायोनुं विवेचन लखीने 'आत्मदर्शन' नामनो ग्रंथ प्रकाशित कर्यो न होत तो पू. मणिचन्द्र महाराज विशेषे अने एमने लखेली सज्जायो विशेषे बहु ओछा लोको जाणता होत. पू. मणिचन्द्रजी महाराज एक विरल आत्मार्थी हता. एमणे लखेली सज्जायो तत्त्वज्ञानथी सभर छे. काव्य तत्त्वनी तेमज अध्यात्मनी दृष्टि एमनी रचनाओ ऊंची कोटिनी छे.

पू. मणिचंद्रनी सज्जायोमां वर्णवायेल अध्यात्मिक दृष्टि अने वैराग्यपूर्ण पदोनी भावना झळके छे तेना गुढार्थ अने गंभीरता तेमज ज्ञान वैराग्य रसने सामान्य मानवीने

સમજવો મુશ્કેલ પડે છે તેથી કર્તાનો આશય સંપૂર્ણપણે સ્પષ્ટ થતો નથી. તેથી આ પદો પર આધ્યાત્મિક દૃષ્ટિ સરલ અને સુંદર અર્થસભર વિશિષ્ટ શૈલીમાં વિવેચન કર્યું છે. જેથી કરીને જિજ્ઞાસુઓ તેનો લાભ લઈ શકે. પૂ. મણિચન્દ્રજીની ઉત્તમ કોટિની રચનાઓ અને તેના પર અર્થ-વિવેચન કરનાર અધ્યાત્મરસિક કવિરાજ શ્રીમદ્ બુદ્ધિસાગરજી મ. સાહેબ હોય તો પૂછવું જ શું?

પ્રસ્તુત ગ્રંથમાં પ્રથમ સજ્ઞાયમાં ભક્તિ જે નવ પ્રકારે થાય છે તેનું વિવેચન ગુરુદેવે સરલ ભાષામાં દરેકને સમજાવ્યું તે રીતે કર્યું છે. (૧) શ્રવણ (૨) કીર્તન (૩) સેવન (૪) વન્દન (૫) નિન્દા (૬) ધ્યાન (૭) લઘુતા (૮) એકતા અને (૯) સમતા. શ્રવણ ભક્તિને સમજાવતાં કહ્યું છે કે આત્માના અનંત ગુણ પર્યાયોનું દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ અને ભાવથી ગીતાર્થ ગુરુ મુખથી સ્વરૂપ શ્રવણ કરવું તે શ્રવણ ભક્તિ છે. કારણ કે તે આત્માની શ્રવણભક્તિ છે.

૯થી શ્રવણક્રિયા ભક્તિથી અનાદિકાલથી લાગેલા કર્મોનો ઉત્કૃષ્ટભાવે એક ક્ષણમાં નાશ પામે છે. આવી જ રીતે નવે પ્રકારની ભક્તિને સદૃષ્ટાંત સુંદર રીતે સમજાવે છે.

चेतन जब तुं ज्ञान विचारे, तब पुद्गल की सविगति छारे ।

आपही आपस भावमें आवे, परपरिणति सत्य दुरे गमावे ॥

हे चेतन! ज्याરે તું આત્માનું જ્ઞાન વિચારે છે ત્યારે પુદ્ગલની સંગતિનો મોહ વારે છે અને તું પોતાના આત્માના સ્વભાવમાં આવે છે તથા રાગ દ્વેષાદિકની પરપરિણતિને દૂર કરી શકે છે. આત્માનું જ્ઞાન વિચારવાથી અને આત્માનું સ્વરૂપ રમણ કરવાથી આત્માની સાથે મોહરૂપ શમતાનો સંબંધ રહેતો નથી. મોરની પાસે સર્પ રહેતો નથી. સિંહની પાસે સસલું રહેતું નથી. પ્રકાશની પાસે અંધકાર રહે નહિ તેમ આત્મજ્ઞાનનો વિચાર કરવાથી પરપરિણતિ પ્રગટેલી હોય છે તો તે તુર્ત શમી જાય છે.

धनरामाने कारणे ध्यातो, आरंभे करी होइ मातो रे ।

जनम गमाव्यो न जाण्यो जातो, फीरे करमे करी तातोरे ॥ज.१॥

पंच कारण योग्यता पावे, कम्मराशी तुटी जावे रे ।

मुगतियोग्यता चेतन थावे, भणे भणिचंद गुण गावे रे ॥ज.१॥

हे ચેતન! તું સુખને માટે ધન પ્રાપ્તિ પાછલ આંધલી દોટ મૂકે છે. તે માટે અહર્નિશ દુર્ધ્યાન ધરે છે. ધન મેલવવા માટે અનેક છલકપટ કરવાં પડે છે. તેથી મનુષ્ય જન્મ

શ્રુતસાગર

49

નવમ્બર-૨૦૧૪

एले जाय छे तेने पण तुं जाणतो नथी. तने वैराग्य दशा केम जागती नथी? हे चेतन! तुं मोहथी अंध बनीने पोतानुं स्वरूप केम भूले छे? तुं आत्मानी शुद्धतानो पुरुषार्थ कर. काल, स्वभाव, नियति, कर्म अने उद्यम ए पांच कारणोथी कार्यनी सिद्धि थाय छे. दरेक कार्यनी सिद्धिमां आ पांच कारणोनी समूह होय छे.

कर्मराशिनो सर्वथा नाश अने आत्मानी मुक्तिमां पांच कारणोनी समवाय होय छे. तेमां उद्यमनी प्रधानताए अन्य कारणोनी समुदाय पण सहचारी छे. कोइ स्थळे कर्म बळी होय छे अने कोई स्थळे उद्यम बळवान होय छे. करोडो रीते अत्यंत उद्यम करतां पण आत्मबळने कर्म हठावे त्यारे समजवुं के उद्यम करतां कर्म बळवान छे. पहेलांथी कर्मनो उदय बळवान छे एम मानी आत्मपुरुषार्थथी भ्रष्ट न थवुं. समये समये दरेक कार्य प्रति पंचकारणनो समवाय होय छे. ज्यां कार्यनी सिद्धि थती नथी त्यां पांच कारणोनी समुदाय मळ्यो नथी एम गणी शकाय. पांच कारणना समुदाय विना एकादि हेतुथी कार्यनी सिद्धि थाय छे, एम मानवुं मिथ्यात्व छे. श्री मणिचंद्रजी आत्माना गुणोनुं गान करीने एनो आनंद माणी रह्या छे.

श्रीमद् 'आत्मदर्शन' ग्रंथनी सज्जायोमां आवता आत्मा-परमात्मा, अंतरात्मा, देह अने मन, चार कषायो, सम्यग्दृष्टि, गुंठाणा, निन्दा, विकथा, आत्मरमणता, क्रोधादि वासनाओ वगैरे अनेक विषयोनी छणावट अध्यात्मिक दृष्टिए करीने सज्जायोमां रहेला विषयोने सरळ रोचक शैलीमां जिज्ञासुओने समजाय ते रीते विवेचन कर्युं छे. आत्माने केन्द्रमां राखी आत्मांमां ज सुख छे, स्वतंत्रता छे अने परमां दुःख, परतंत्रता छे माटे तुं आनंदरस पामवा बाह्य साधनोनी उपयोग करीश नहि. आत्मांमां ज स्थिर थई सुख भोगव.

आत्मतत्त्व दर्शन - पृ. १००

देव, गुरु अने धर्म ए त्रण तत्त्वोमां सर्व धर्मनी मान्यताओनो समावेश थाय छे. सर्व धर्मना शास्त्रोमां देवगुरु धर्म संबंधी परस्पर विरुद्ध भिन्न भिन्न मान्यताओ दर्शावेली जोवा मळे छे. विश्वनो मोटो भाग पोतपोतानी मति अनुसार देवगुरु धर्मने माने छे अने भविष्यमां मानशे. जे तत्त्वो अनादिकाळनां छे ते अनंतकाल पर्यंत रहेवानां, बाकीनां तत्त्वो तो नष्ट थया विना रहेशे नहि. दरेक दर्शनमां अमुक तत्त्वोनुं प्रतिपादन करवामां आव्युं होय छे, परंतु ते तत्त्वो पण परस्पर धर्मना तत्त्वज्ञोने विरुद्ध असत्य लागे छे.

કેટલાક મનુષ્યોને પ્રકૃતિને અનુકૂલ ધર્મ પસંદ આવે છે. વેદાન્ત ભાગવત ધર્મમાં પ્રકૃતિને અનુકૂલ ધર્મની માન્યતા સંબંધી વિશેષ વ્યવસ્થા દેખાય છે, કેટલાક મનુષ્યોને બુદ્ધિની પ્રધાનતાએ ધર્મ પસંદ આવે છે. બૌદ્ધ વગેરે દર્શનો બુદ્ધિવાદની અપેક્ષા ધર્મને માને છે. કેટલાક મનુષ્યોને ઈશ્વર કર્તૃત્વવાળો ધર્મ પસંદ પડે છે, ત્યારે કેટલાકોને તેનાથી વિરુદ્ધ ધર્મ પસંદ પડે છે, કેટલાક મનુષ્યોને સાકાર ઈશ્વર માનવો પસંદ પડે છે ત્યારે કેટલાકોને નિરાકાર ઈશ્વર માનવો પસંદ પડે છે. દૃષ્ટિ સૃષ્ટિવાદ, વિવર્તવાદ, પરિણામવાદ, સ્યાદ્વાદ, એકાંતવાદ, નિત્યવાદ, અનિત્યવાદ, વગેરે સર્વ મતો ભિન્ન ભિન્ન બુદ્ધિથી પ્રગટેલા છે. તેમાં જેને જે પસંદ પડે છે તે તેને માને છે.

આ ગ્રંથમાં જૈનેતર વેદ વેદાન્તાદિ દર્શનીય શાસ્ત્રોથી આત્માના તત્ત્વોની માન્યતા સિદ્ધ કરવામાં આવી છે. અને જૈન તત્ત્વો સંબંધી શ્રી શંકરાચાર્ય વગેરેના વિચારોની સમાલોચના કરવામાં આવી છે. સમાલોચનામાં જૈનતત્ત્વોની માન્યતા યોગ્ય છે એવી દિશા દર્શાવી છે. દુનિયામાં જેટલાં દર્શનો થયાં તેઓનાં તત્ત્વો વગેરેની માન્યતાઓનું પરસ્પર ઁંડન-મંડન થયા વિના રહું નથી. જો દરેક ધર્મના તત્ત્વોને પક્ષપાત વિના શુદ્ધ બુદ્ધિથી અને તટસ્થતાથી તપાસીને એમાંથી સત્ય તત્ત્વ તારવવામાં આવે તો એના વડે મનુષ્યને લાભ થાય છે.

આ ગ્રંથમાં યોગનિષ્ઠ આચાર્યશ્રી જણાવે છે કે પરમાત્માપદની પ્રાપ્તિમાં અનેક અજ્ઞાનના પડદાઓ આવે છે, માટે રાગદ્વેષનો ત્યાગ કરીને ધર્મશસ્ત્રોદ્ધારા ધર્મ તત્ત્વોનો અનુભવ કરવો જોઈએ. દેશ, ધર્મ, સમાજ ધર્મ, નીતિ, રાષ્ટ્ર પ્રેમ, મોક્ષ ધર્મ વગેરેનું સમ્યગ્ સ્વરૂપ પ્રતિપાદન કરનારા તીર્થંકર પ્રભુઓના ઉપદેશનો અનુભવ કરવો જોઈએ. રાગદ્વેષનો સર્વથા ક્ષય કરીને જેને જ્ઞાન ગુણની પેલી પાર કેવલજ્ઞાન પામીને ઉપદેશ આપ્યો છે. એવા ચોવીસમાં તીર્થંકર મહાવીર પ્રભુના સિદ્ધાંતોનું શ્રવણ, વાચન અને મનન કરીને આત્માદિ તત્ત્વોનો અનુભવ મેલવવો જોઈએ. શ્રી મહાવીર પ્રભુએ કેવલજ્ઞાન પામીને સર્વ ધર્મોમાં રહેલા સત્યોને અપેક્ષાએ સમજાવ્યાં છે. અને તેથી સર્વ ધર્મોના સત્યોમાં જે મતકદાગ્રહ હતો તે દૂર કર્યો છે, તેથી ગુરુગમ લઈ જે કોઈ જૈનાગમોને વાંચશે તે આત્માદિ તત્ત્વોના સત્યને પામશે અને સર્વ ધર્મોપર થતા રાગદ્વેષને દૂર કરી સમભાવ પ્રાપ્ત કરી પરમાત્માને પ્રાપ્ત કરશે એમ મને અનુભવે સમજાય છે. ધર્માદિ સર્વ બાબતોના અપેક્ષાવાદને સમજાવી મતકદાગ્રહ પક્ષપાત અજ્ઞાનતાને દૂર કરાવનાર શ્રી મહાવીર પ્રભુના ઉપદેશની જેટલી સ્તુતિ કરીએ તેટલી થોડી છે.

આ ગ્રંથમાં પૂજ્યશ્રીએ જૈનેતર વેદાંતાદિ દર્શનીય શાસ્ત્રોથી આત્માના તત્ત્વોની

શ્રુતસાગર

51

નવમ્બર-૨૦૧૪

માન્યતા સિદ્ધ કરી છે અને જૈન તત્ત્વો સંબંધી શ્રી શંકરાચાર્ય વગેરેના વિચારોની સમાલોચના કરીને જૈનતત્ત્વોની માન્યતાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. જૈનેતર ધર્મશાસ્ત્રોમાં પ્રતિપાદિત આત્મા, પરમાત્મા, કર્મ વગેરે તત્ત્વોની ચર્ચા કરીને જૈનશાસ્ત્રોમાં પ્રતિપાદિત આત્મા, પરમાત્મા, મોક્ષ, કર્મ વગેરે તત્ત્વોનો અનેક સાપેક્ષ દૃષ્ટિથી વિચાર કરવામાં આવ્યો છે.

યોગનિષ્ઠ આચાર્ય શ્રી બુદ્ધિસાગરસૂરીશ્વરજીનું ગુજરાતી તેમજ સંસ્કૃત ભાષા પરનું પ્રભુત્વ સ્પષ્ટ વર્તાઈ આવે છે. બુદ્ધિસાગરજીએ એક લેખક તરીકે જનસમુદાયને બોધદાયક પુસ્તકોનું બહુમોટું પ્રદાન કર્યું છે. આત્મજ્ઞાન અને અધ્યાત્મજ્ઞાન જેવા ગહન વિષયને વાચકો સહજ રીતે સમજી શકે તે રીતે ભાષાનો ઉપયોગ કર્યો છે. એમના ૧૦૮ ગ્રંથ શિષ્યો મોટું પ્રદાન તો છે જ. પરંતુ એમને લખેલી રોજનિશીનું પળ તેમની કલમની વિશેષતાનું દર્શન કરાવે છે. શ્રીમદ્ બુદ્ધિસાગરજીએ બુદ્ધિપ્રભા માસિક દ્વારા પળ પોતાની લેખિની અનેક વિષયોમાં ચલાવી છે. આમ સમગ્ર રીતે જોઈએ તો બુદ્ધિસાગરસૂરીશ્વરજી એક મહાન વિચારક, લેખક, રોજનિશીકાર અને વિશિષ્ટ માસિકના સંપાદન તરીકે સમાજમાં પ્રસિદ્ધ થયા છે.

સંદર્ભ સાહિત્ય

૧. પોરવાલ, રેણુકા જિનેન્દ્ર, યોગનિષ્ઠ આચાર્ય શ્રીમદ્ બુદ્ધિસાગરસૂરીશ્વરજી મહારાજ : એક અધ્યયન, મહેસાણા, શ્રી સીમન્ધરસ્વામિ જિનમંદિર પેઢી અને ઓસિયાજી તીર્થ, શ્રી સીમન્ધરસ્વામિ જિનમંદિર કાર્યાલય ઇ. સ. ૨૦૦૩, પૃ. ૫૬૦, કિં. રૂ. ૫૦.
૨. જયભિલ્લુ અને પાદરાકર, યોગનિષ્ઠ આચાર્ય શ્રીમદ્ બુદ્ધિસાગરસૂરીશ્વરજી, મુંબઈ શ્રી અધ્યાત્મ જ્ઞાનપ્રસારક મંડલ, પૃ. ૧૭+૩૬૮+૧૫૨, ઇ. સ. ૧૯૫૦
૩. બુદ્ધિસાગરસૂરિ સ્મારક ગ્રંથ, મુંબઈ, અધ્યાત્મ જ્ઞાનપ્રસારક મંડલ, ઈ. સ. ૧૯૨૬, પૃ. ૨૨૦
૪. ઉદયકીર્તિસાગર, આપણા સહુના બુદ્ધિસાગર, વિજાપુર, શ્રીમદ્ બુદ્ધિસાગરસૂરિ જૈન સમાધિ મંદિર, પૃ. ૧૩૨, ઇ. સ. ૨૦૦૩, કિંમત રૂ. ૪૦.
૫. અકલંકવિજયજી મ. સા. (સંપા.), બુદ્ધિસાગરસૂરીશ્વરજી મ. સા. ની જીવનઝરમર સં. ૨૦૪૬, પૃ. ૮૦

हस्तप्रत लेखन परंपरा से सम्बद्ध विद्वान परिचय

संजयकुमार झा

(गतांक से आगे...)

व्याख्याने श्रुत-प्रतिलेखक द्वारा लिखित प्रत पर से साधुभगवन्त द्वारा व्याख्यान दिये गये हों तथा जिस श्रावक, शेट, संघपति आदि के द्वारा व्याख्यान काल में पाठ सुने गये हों। उस प्रत के प्रतिलेखन पुष्पिका में “व्याख्याने श्रुतम्” के उल्लेखपूर्वक व्याख्याता, श्रोता आदि के नाम दिये होते हैं। उसी शब्द को ग्रहण करते हुए वह नाम संकलन किये हुए मिलते हैं।

समर्पित-प्रतिलेखक द्वारा लिखित किसी प्रत को या स्वद्रव्य व्यय करके किसी प्रत को लिखवाकर किसी साधुभगवंत को जब समर्पण किया जाता है, अथवा तो ज्ञानपंचमी, उपधान, पर्युषणादि विशेष अवसर पर ग्रंथ वहोराया जाता है तथा उसका उल्लेख प्रतिलेखन पुष्पिका में जिसके लिये समर्पितम् ऐसा लिखा हो, ऐसे नाम को विद्वान प्रकार 'समर्पित' के रूप में जाना जाता है। उदाहरणार्थ प्रतसंख्या-३५ महानिशीथसूत्र नामक प्रत की पुष्पिका देखी जा सकती है कि श्रावक माणेकलाल चुनीलाल ने वि.सं.१९९६ में प्रतिलेखक कस्तूरचंद व्यास के द्वारा मुंबई में प्रत लिखवाकर पूज्य पंन्यास श्रीप्रीतिविजयजी को समर्पण किया है।

चित्कोषे (ज्ञानभंडारे) स्थापित-प्रतिलेखन पुष्पिका में उल्लिखित जिस व्यक्ति द्वारा ज्ञानभंडार में हस्तप्रत स्थापित करायी जाय, उनका नाम यहाँ मिलता है। उदाहरण के लिये प्रतसंख्या-६५४ ठाणांगसूत्र सह वृत्ति की प्रतिलेखन पुष्पिका में यह उल्लेख मिलता है-वि.सं.१७०५ में अंचलगच्छीय आ. कल्याणसागरसूरि के राज्य में धवलकनगर के ग्रंथागार में यह ग्रंथ वाचक विजयशेखर गणि के शिष्य मुनि गणेश ने भव्य जीवो के पठन-पाठन हेतु रखा।

गृहीत-यहाँ समर्पित के भाँति इस विद्वान प्रकार को समझ सकते हैं। अन्तर इतना ही है कि समर्पित में मात्र साधुभगवन्त को प्रत समर्पण करते हैं। इस प्रकार के अन्तर्गत सामाजिक व्यवहार में जैसे कोई वस्तु की लेन-देन होती है उसी प्रकार प्रतों का भी आदान-प्रदान होता है। यहाँ ग्रहण करनेवाले व्यक्ति के नाम को संयोजन करने हेतु इस विकल्प का चयन करते हैं। प्रत संख्या १४९ के अंत में वि.सं.१५८० में श्रावक वच्छ शाह द्वारा प्रदत्त प्रत श्रावक नरसिंह शाह द्वारा ग्रहण किये जाने का उल्लेख मिलता है। जिसे विद्वान प्रकार 'गृहीत' के रूप में दर्शाया गया है।

श्रुतसागर

53

नवम्बर-२०१४

दत्त-जिस व्यक्ति के द्वारा हस्तप्रत प्रदान की गयी हो उस व्यक्ति को 'दत्त' प्रकार का विकल्प चुनकर देनेवाले का नाम उसके साथ लिंक करते हैं, किसी ने माल पढने के लिये भी किसी को प्रत दी हो तो स्पष्ट रूप से प्रत के अंत में लिखा मिलता है कि- 'आ प्रत वांचवा सारु आपी छे, कोइए दावो करशो नहीं'। इस प्रकार के व्यवहार का यदि संकलन किया जाय तो कृति के विषयवस्तु के बाद में लिखित प्रतिलेखक तथा हस्तप्रत के मालिक आदि के संबंध में एक सुंदर परंपरागत व्यवहार का दर्शन हो पायेगा. प्रत संख्या १४९ के अंत में वि.सं. १५८० में श्रावक वच्छ शाह के द्वारा श्रावक नरसिंघ शाह को दिये जाने के कारण श्रावक वच्छ शाह को विद्वान प्रकार 'दत्त' के रूप में बताया गया है.

क्रीत-व्यावहारिक लेन-देन के अंतर्गत ही हस्तप्रत के महत्त्व के अनुसार विक्रेता के द्वारा तय की गयी धनराशि को क्रेता जब खरीद लेता है तो उसके लिये क्रीत विद्वान प्रकार का चयन करते हैं. व्यावहारिक लेन-देन, खरीद-बिक्री जैसी बातें मूल प्रतिलेखक द्वारा लिखित नहीं होती अपितु परवर्ती काल में जिस व्यक्ति द्वारा क्रय-विक्रय होता है, वह लिखता है अथवा किसी से लिखवाता है. अनुमानतः यह भी कहा जा सकता है कि बाद में कोई इस प्रत दावा नहीं करे कि यह प्रत मेरी है. इस प्रकार के भावयुक्त पुष्पिकाओं में उल्लेख मिलते रहते हैं. उदाहरण के लिये प्रत संख्या-२१३९८ उपदेशमाला नामक प्रत के अंत में "उपदेशमाला की पोथी-मूलचंदनै दीनी २/ एलचपुरमै सं.१८९४ मिती आसोज सुदी५ गुवचंद दीनी।कोइ दावो करणपावै नहीं" का उल्लेख मिलता है.

विक्रीत-क्रीत की भाँति विक्रीत भी समझने योग्य है. एक ही पुष्पिका में प्रायः दोनों उल्लेख मिलते हैं, कारण कि क्रीत व विक्रीत का परस्पर संबंध होता ही है. एक के बिना दूसरे का होना संभव नहीं है. अमुक व्यक्ति के पास से मैंने यह हस्तप्रत इतने रूपये/आने/पैसे आदि में खरीदी. यहाँ दोनों व्यक्ति की क्रियाएँ अलग-अलग होने से तथा बेचने संबंधी विक्रीत नाम का प्रकार दर्शाने के लिये भेद रखा गया है.

प्रतिलिपिकृत-वस्तुतः परंपरा से लिखी गयी प्रत एक दूसरे की प्रतिलिपि ही होती है किन्तु किसी लहिये ने निखालसपूर्वक याथातथ्य को स्वीकारा है तो हमें भी परिचय उसी प्रकार से देना उचित है. अतः लिपिकार व प्रतिलिपिकार ये दो अलग-अलग प्रतिलेखक प्रकार हुए. प्रास्ताविक वक्तव्य में यह कहा जा चुका है कि प्रतिलेखक बड़े ही सरल स्वभाव के होते हैं. मूल कृतिगत विषयवस्तु को यथावत् लिखने के बाद प्रतिलेखन पुष्पिका में जो भी वास्तविकता होती है उसे साफ-साफ उल्लेख कर देते हैं. उदाहरण के लिये प्रत संख्या-२२७६ दुंदुकमत चर्चा नामक प्रत

आत्मारामजी के शिष्य शांतिविजयजी के द्वारा लिखित है, इसी प्रति पर से अमरदत्त ब्राह्मण मेदपाटी ने प्रतिलिपि की है।

हस्तप्रतों में प्राप्त उदाहरणों से इसे अग्रलिखित रूप से बताया जा रहा है-

मूल प्रतिलेखक व प्रतिलिपिकार की प्रतिलेखन पुष्पिकाओं का स्पष्ट उल्लेख-प्रतिलिपिकार के द्वारा लिखित प्रतें जो स्पष्ट रूप से देखने को मिलती हैं, उसमें जिस प्रतिलेखक के प्रत पर से प्रतिलिपि की जाती है, प्रतिलिपिकार उस प्रतिलेखक की सम्पूर्ण प्रतिलेखन पुष्पिका पहले लिखता है, इसके बाद वह अपनी प्रतिलेखन पुष्पिका का उल्लेख करता है, उसमें कहीं-कहीं 'प्रतिलिपिकृतम्' ऐसा लिखा हुआ देखने को मिलता है।

अन्यस्रोत से प्राप्त प्रत की प्रतिलिपि करने का उल्लेख-प्रतिलेखक के पास अपेक्षित अनुपलब्ध प्रत होने से जिस किसी स्रोत से वह प्रत प्राप्त करके उसकी नकल करता है, तो अपनी प्रतिलेखन पुष्पिका का स्पष्ट उल्लेख करता है कि अमुक संवत्, मास, पक्ष, तिथि, वार को अमुक व्यक्ति से प्रत प्रतिलिपि करने हेतु लिया तथा इतने दिनों में लिखकर वापस किया।

प्रतिलिपिकृत भ्रामक प्रतिलेखन पुष्पिका-किसी-किसी प्रत में तो किसी पुरानी प्रत पर से प्रतिलेखक प्रतिलिपि करता है तथा उस प्रत में जो उपलब्ध प्रतिलेखन पुष्पिका होती है उसे तद्वत् लिख देता है, किन्तु अपने बारे में प्रतिलेखन पुष्पिका कुछ भी नहीं लिखता है। ऐसी अवस्था में भ्रम होता है कि प्रत में जो उल्लिखित प्रतिलेखन संवत् है, क्या वह सही है? प्रतिलेखन संवत् व लिखावट दोनों एक दूसरे सम्बन्धित विषय है। प्रतिलेखन संवत् न होने पर भी प्रत की लिखावट व मरोड़ से अनुमानित वर्ष का आकलन करते हैं, उल्लिखित वर्ष व लिखावट में सामान्य अन्तर को समझा जा सकता है, किन्तु ज्यादा अन्तर हो तो भ्रम का कारण बनता है। जैसे कि वि.सं. १६वीं की प्रत पर से कोई वि.सं. १८वीं में नकल करता है, उसमें पूर्वप्रतिलेखक का उल्लेख करता है किन्तु अपने बारे में कुछ भी उल्लेख नहीं करता, ऐसे में प्रत की लिखावट के आधार से यह माना जाता है कि यह प्रत वि.सं. १६वीं में लिखी गयी प्रत की प्रतिलिपि है। इस स्थिति में निश्चित वर्ष मिलते हुए भी अनुमानित वर्ष का आकलन करके संतोष करना पड़ता है।

अन्य-किसी व्यक्ति का नाम तो प्रतिलेखन पुष्पिका में है परन्तु लहिया उपरोक्त प्रकारों में से किसी का उल्लेख नहीं करता है, उसे "अन्य" नाम का विद्वान प्रकार कहा जाता है। ऐसे भी विद्वान हैं, जिन्होंने परवर्ती काल में मात्र अपना हस्ताक्षर कर

श्रुतसागर

55

नवम्बर-२०१४

दिया है, थोड़ा कुछ लिखकर यूं ही नाम लिख दिया है, ऐसे विद्वानों को मात्र उनकी ऐतिहासिकता के प्रमाण के तौर पर अपनी सूची में रखने हेतु संग्रह करते हैं। मूल प्रतिलेखक से इनका किसी प्रकार का संबंध नहीं होता है। कालान्तर में कभी-कभी मूल लेखन के काफी बाद में पेंसिल से लिखा हुआ प्रत के स्वामित्व भाव को दर्शाने हेतु नाम लिखा मिलता है। प्रत संख्या-५१२७२ स्तम्भन पार्श्वनाथ स्तवन नामक प्रत रूपकुंवरी श्राविका के अध्ययन के लिये लिखी गयी है। अतः इस प्रत की प्रतिलेखन पुष्पिका में रूपकुंवरी को साध्वी लब्धिलक्ष्मी की 'निसालणी' बताया गया है, परन्तु साध्वी लब्धिलक्ष्मी हेतु उपर्युक्त विद्वान प्रकारों में से कोई प्रकार न होने पर इन्हें विद्वान प्रकार अन्य के द्वारा सूचि में संकलन किया गया है।

फिर से एक बार बताना चाहते हैं कि प्रतों में रचना के अतिरिक्त उपलब्ध तत्कालीन व परवर्ती समय में चाहे जितने भी लोगों के नाम मिलते हों, उसे संगणकीय सूचना संग्रहण पद्धति के अन्तर्गत अचूक समावेश किया जाता है, ऐसे जिन लोगों के नाम मिलते हैं, उन्हें विद्वान की संज्ञा द्वारा ही पहचानते हैं। इससे हमें पुरातन लेखन कार्य का पारंपरिक व्यवहार ज्ञात होता है। विद्वानों की सूची तैयार होती है, कभी-कभी कोई ऐतिहासिक कड़ी भी मिल जाती है। इस प्रकार विद्वानों की सूचनाओं का संग्रह करने पर ज्ञानमंदिर की सूचना समृद्धि में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सतत अभिवृद्धि होती रहती है। व्यवसायिक रूप से लिखनेवालों में मुख्यतया ब्राह्मण, बारोट, संन्यासी, यति आदि समाज के लोग मिलते हैं। परंपरागत लिखने की पेशा के कारण अपने नाम के बाद लहिया ऐसा उल्लेख भी प्रतों में मिलता है।

ज्ञानमंदिर के इस ज्ञानयज्ञ में चल रहे विविध कार्यों में एक महत्वपूर्ण कार्य हस्तप्रत सूचीकरण के अन्तर्गत हस्तप्रत से सम्बद्ध नयी-नयी जानकारियों व कार्यगत अनुभवों को एक नये विषय के माध्यम से वाचकों के सम्मुख प्रस्तुत करने की शृंखला अगले अंकों में भी इसी तरह जारी रहेगी।

ध्यातव्य-शक्यतम प्रयासों के द्वारा संबंधित उदाहरणों को बताया गया है। जो यूं ही स्पष्ट है उसका उदाहरण नहीं दिया गया है। उदाहरण के अन्तर्गत उल्लिखित प्रतसंख्या भी आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर के हस्तप्रत भंडार की है। वाचकों को हस्तप्रत वाचन/अध्ययन रसप्रद लगे तथा हस्तप्रत संपादन-संशोधन की दिशा में जागृति लाने हेतु साथ ही हस्तप्रतों के प्रति अभिरुचि बढे, एतदर्थ स्वानुभव से मौलिक लेख के द्वारा संदेश देने का एक प्रयासमात्र है। वाचक इससे किञ्चित् भी लाभान्वित होते हैं तो लिखना सार्थक समझा जायेगा।

समराईच्च कहा परिचय

पं. श्री धुरंधरविजयजी

चौदसो चुमालीस ग्रन्थना कर्ता श्री, हरिभद्रसूरिजी म. नी कलमथी लखायेली 'श्रीसमरादित्यकथा' कथा ग्रन्थोमां अपूर्व अने अजोड स्थान धरावे छे. श्री हरिभद्रसूरिजी म. जेटलुं संस्कृत भाषा उपर प्रभुत्व धरावता हता तेटलुं ज के तेथी पण विशेष प्रभुत्व प्राकृत भाषा उपर धरावता हता.

तेओश्रीने आगम अने न्याय (दार्शनिक) विषयोनुं अगाध ज्ञान हतुं ए तेमना ते ते ग्रन्थो जोतां स्पष्ट जणाय छे. पण साहित्यना विषयमां तेमनो अगाध तलस्पर्शी प्रवेश हतो तेनुं भान तो 'समराईच्च कहा' करावे छे. 'अनेकांतजयपताका' जेवा कर्कश तर्कग्रन्थ गुंथनारा आवुं प्रसन्न अने रसमय सर्जन करी शके छे ए ख्याल समराईच्च कहा जोतां आवे छे.

आ कथानी उत्पत्तिनो सामान्य इतिहास एवो छे के पू. आ. श्री हरिभद्रसूरिजी म. ना बे भाणेजो हंस अने परमहंस नामना हता, तेओने दीक्षा आप्या बाद बौद्ध दर्शननां रहस्यभूत तत्त्वो जाणवा माटे बौद्धो पासे मोकल्या. वखत जतां वात खुल्ली पडी गई के आ बन्ने जण आपणां रहस्यो जाणवा माटे आव्या छे. बन्ने जणा त्यांथी नासी छूट्या, बौद्धो पाछळ पड्या. छेवटे बन्नेनुं अकाळे अवसान थयुं. आ हकीकत आचार्यश्रीना जाणवामां आवतां तेमने पारावार क्रोध व्यापी गयो ने बधा बौद्धोने एक साथे कडाईमा कडकडता तेलमां तळी नाखवानो संकल्प कर्यो.

आ संकल्पनी आचार्यश्रीना गुरुजीने जाण थतां तेमणे समरादित्य चरित्रना विपाकने समजावती केटलीक गाथाओ लखी मोकली. ते विचारतां आचार्यश्रीनो क्रोध शमी गयो. पोताना संकल्प माटे तेओश्री पश्चात्ताप करवा लाग्या अने तेना प्रायश्चित्त तरीके १४४४ ग्रन्थनी रचना करवानो दृढ संकल्प कर्यो. पोताना आत्मघातक विचारोने शमन करनारी आ कथा तेओश्रीना जीवननी एक मुख्य घटना बनी गई अने साहित्य सृष्टिमां शिरोमणि भावने धारण करती आ कथासृष्टिमां प्रगट थई. शिष्योनो विरह थयो ते प्रसंगने अनुलक्षी ग्रन्थने अंते 'विरह' एवुं पद प्रायः त्यार पछी रचायेला तेओश्रीना ग्रन्थमां मळे छे. आ 'समराईच्च कहा'ने अंते पण ए पद आ प्रमाणे छे.

जं विरइऊण पुण्णं, महाणुभावचरियं मए पत्तं ।

तेण इहं भवविरहो, होउ सया भवियलोयस्स ॥

श्रुतसागर

57

नवम्बर-२०१४

आ कथा लगभग दसहजार श्लोक प्रमाण छे: संक्षेपमां कथा वस्तु आ प्रमाणे छे.

प्रारंभमां मंगलादि करीने कथाना प्रकरोनुं सुन्दर स्वरूप वर्णव्युं छे. सुन्दर पीठिका रचीने कथानो अवतार कयो छे.

पीठिकाळो :- आ कथानी बीजभूत त्रण गाथाओ के जे प्राचीन छे. ते आपी छे ते नीचे प्रमाणे छे.

गुणसेण-अग्गसम्मा१, सीहाऽऽणन्दायर तह पियाउत्ता ।

सिहि-जालिणि३ माइ-सुया, धण धणसिरितिमोय४ पइ-भज्जा ॥

जय-विजया५ य सहोयर, धरणो लच्छीय६ तह पईमज्जा ।

सेण-विसेणा७ पित्तिथ-उत्ता जम्मम्मि सत्तमए ॥

गुणचंद-वाणमंतर८, समराइच्च९ गिरिसेणपाणो उ ।

एक्कस्स तओ मोक्खो, बीयस्स अणन्तसंसारो ॥

आ नव भवनुं विस्तारथी वर्णन करीने कथा नव विभागमां वहेंचायेली छे. एक एक विभागमां एक भवनुं वर्णन आवे छे.

प्रथमभव:-

गुणसेन राजपुत्र छे अने अग्निशर्मा पुरोहितपुत्र छे. शरीरे अने स्वभावे विचित्र पुरोहितपुत्र सर्वनुं उपहासपात्र छे. संसारथी कंटाळीने ते तापस बने छे ने राजपुत्र राजा थाय छे. भव्य तपस्वी तापसना आश्रममां एकदा राजा जई चडे छे अने सर्वनो परिचय मेळवतां अग्निशर्मानो पण परिचय मेळवे छे. महिनाने पारणे महिनाना उपवासनुं तप तपता अग्निशर्माने जोई राजानुं हृदय भक्तिथी आर्द्र बने छे ने तेमां पण एक जग्याएथी ज मळे ते ज वापरवुं. न मळे ने फेरो खाली जाय तो आगळ महिनाना उपवास चालु करवा. आ सांभळी राजा खूब ज चकित थाय छे. पोताने पारणानो लाभ आपवा आग्रहभरी विज्ञप्ति करीने राजा पोताने आवासे आवे छे.

पारणे अग्निशर्मा राजाने त्यां जाय छे, दिवसोथी झंखतो राजा ते ज दिवसे अवर्णनीय माथानी वेदनाथी पीडाय छे, सर्व परिवार राजानी परिचर्यामां पड्यो छे. अग्निशर्मा थोडो समय रोकाईने चाल्यो जाय छे. स्वस्थ थया पछी राजा तपास करे छे ने खूब ज खिन्न थाय छे. आश्रमे जईने मनावे छे, ने आवतुं पारणुं पोताने त्यां थाय एवुं नक्की करीने आवे छे. बीजा पारणाने ज दिवसे राजाने त्यां राणीने पुत्रजन्म थाय छे ने ते व्यवसायमां पडेलो बधो परिवार आवेला अग्निशर्मानी संभाळ लेतो नथी. पारणानो

દિવસ ચાલ્યો ગયો, તપસ્વી આવીને પાછા ફર્યાની રાજાને જાણ થતાં તેના પશ્ચાત્તાપનો પાર રહેતો નથી. ફરીથી આશ્રમે જાય છે.

પારાવાર પ્રયત્ને અગ્નિશર્માને મનાવીને લીજી વચ્ચે પારણું પોતાને ત્યાં કરવાનું નક્કી કરીને આવે છે. ભવિતવ્યતાને બંધ લીજી વચ્ચે પારણાને જ દિવસે ક્ષણ ક્ષણની કાઠજી રાખવા છતાં રાજાના નગર ઉપર શત્રુ ચડી આવે છે તેની સામે યુદ્ધ કરવા રાજાને જવું પડે છે. આવ્યા એવા તપસી પાછા ફરે છે. અહીં બાજી બગડે છે. વેરનું બીજ અગ્નિશર્માના આત્મામાં વવાય છે. પોતાના ભૂતકાળને યાદ કરતો અગ્નિશર્મા રાજા પ્રત્યે ખૂબજ ક્રોધે ભરાય છે ને ભવોભવ હું આ વેરનો બદલો લઉં એવા સંકલ્પપૂર્વક યાવજીવ આહારનો ત્યાગ કરે છે.

રાજા અને તાપસ વર્ગ એમને ખૂબ જ સમજાવે છે પણ હવે કાંઈ વલ્લું નથી. રાજા પ્રશમ ભાવ ધારણ કરીને આત્માને વાળે છે. પોતાના વર્તન માટે તેને ઘણું જ લાગી આવે છે. આ પ્રથમ ભવથી જ બંને માર્ગો જુદા પડી જાય છે. એક પ્રશમ ભાવમાં આગળ વધે છે ને અન્ય વિષમ ભાવમાં પ્રગતિ સાધતો જાય છે. આ વિભાગમાં શ્રીવિજયસેન આચાર્ય મહારાજનું કથાનક સુન્દર વૈરાગ્યજનક આવે છે. આશ્રમો કેવા હોય, તાપસો કેવા હોય તેનું હૃદયંગમ વર્ણન પણ વિશિષ્ટ રીતે અહીં આપ્યું છે. સમ્યક્ત્વથી આરંભીને શ્રાવકધર્મ સાધુધર્મ યાવત્ ક્ષપકશ્રેણિથી માંડીને કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્તિ સુધીનું યથાક્રમ વર્ણન ગુરુમહારાજના ઉપદેશમાં છે. ભાષાપ્રવાહ એકસરખો આકર્ષક છે. આગળ આગળ વાંચવાનું મન થયા જ કરે. છેવટે ગુણસેને ભાવેલી ભાવના ઘણી જ અસરકારક છે. આરાધના માટે ઉપયોગી છે. એ રીતે પ્રથમ ભવ પૂર્ણ થાય છે.

બીજો ભવ:-

દરેક ભવની શરૂઆતમાં પૂર્વભવનું અનુસંધાન અને જે ભવનું વર્ણન કરવાનું છે તેનો નામનિર્દેશ કરતી એક ગાથા છે. આ બીજા ભવની શરૂઆતમાં તે ગાથા આ પ્રમાણે છે-

ગુણસેન-અગ્નિસમ્મા, જે ભગિયમિહાસિ તં ગયમિયાણિં ।

સીહા-ગન્દા ય તહા, જં ભગિયં તં નિશામેહ ॥

જયપુર નગરમાં પુરુષદત્ત રાજાને ત્યાં શ્રીકાંતાની કુક્ષીએ ગુણસેનનો જીવ જન્મે છે ને સિંહના સ્વપ્ન અનુસાર તેનું નામ સિંહકુમાર રાખવામા આવે છે. રાજકુમારને યોગ્ય વિશિષ્ટ સર્વ કલાકલાપ શીખીને તૈયાર થાય છે. યૌવન વયમાં આવ્યા પછી એક દિવસ ઉદ્યાનમાં જાય છે. ત્યાં પોતાના મામા લક્ષ્મીકાન્તની પુત્રી કુસુમાવલી ક્રીડા કરવા

શ્રુતસાગર

59

નવમ્બર-૨૦૧૪

આવી છે. અરસ-પરસના દર્શનથી બન્નેના હૃદયમાં ગાઢ આકર્ષણ જન્મે છે, ને છેવટે બન્નેના વિવાહ થાય છે.

ઉચિત સમયે રાજા પુરુષદત્ત સિંહકુમારને રાજ્ય સોંપી પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ કરે છે. નીતિપૂર્વક રાજ્યનું પાલન કરતાં રાજા સિંહને ત્યાં જ કુસુમાવલીની કુક્ષીએ અગ્નિશર્માનો જીવ અવતરે છે. રાણીને અનેક દુષ્ટ દોહદ થાય છે. છેવટે રાજાના આંતરડાં યાવવાની ઈચ્છા થાય છે. રાણી આવી અનિષ્ટ ઈચ્છાઓ ઘણી દબાવે છે પણ દાબી શકાતી નથી. ગર્ભપાત કરવા વિચાર કરે છે છતાં તે પણ બની શકતું નથી.

સુગુણ રાજા તેની તે તે ઈચ્છાઓ પૂરે છે. બાઠકનો જન્મ થયા પછી પણ દાસી દ્વારા તેને ક્યાંય રચડતો મૂકી દેવાની વ્યવસ્થા રાણી કરે છે પણ રાજાને તેની ચબર પડે છે ને કુમારને બચાવી લે છે. દુધ પાઈને ઝેરી સાપને ઉછેરે તેમ રાજા પુત્રને ઉછેરે છે ને તેનું આનંદ એવું નામ પાડે છે. કુમાર વયમાં આવે છે. પોતાની દુષ્ટતા અનેક પ્રકારે બતાવે છે. છેવટે રાજાને કેદમાં પૂરે છે ને વચત જતાં તલવારથી હણે છે. શુભ ધ્યાને મરીને સિંહ પાંચમા દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે ને આનંદ પહેલી નરકે જાય છે.

આ વિભાગમાં સ્નેહના અંકુર પ્રેમીઓનાં હૃદયમાં ઉત્તરોત્તર કયા ક્રમે વિકાસ પામે છે. તેનું અને વિવાહવિધિનું વિશિષ્ટ વર્ણન સુન્દર રીતે બતાવ્યું છે. ધર્મઘોષસૂરિમહારાજનું કથાનક રોચક ને ભવનિર્વેદ ઉત્પન્ન કરે છે. મધુબિન્દુનું દૃષ્ટાન્ત પણ હૃદયને હચમચાવે એવી રીતે આ વિભાગમાં રજૂ થયું છે. મોટા મોટા સમાસો અને પ્રસંગે પ્રસંગે ટૂંકા ટૂંકા વાક્યસંહો નદીમાં વહેતા શાંત ગંભીર જલપ્રવાહની જેમ વહે છે. ને વાચક તે પ્રવાહમાં તળાવો જાય છે તેની ઈચ્છા એવી હોય કે હવે આમાંથી છૂટો થાઉં પણ તેમ તે કરી શકતો નથી. પ્રવાહમાં ને પ્રવાહમાં તેને ચેંચાવું જ પડે છે એ જ આ કથાની ચૂંબી છે.

ત્રીજો ભવ:-

વચ્ચાયાં જં ભણિય, સીહાણંદા ય તહ પિયાપુત્તા ।

સિહિ-જાલિણિમાઙ્ગસુઆ, એત્તો એઅં પવચ્ચામિ ॥

એ પ્રથમનું અનુસંધાન કરનારી ગાથા છે. ત્રીજા ભવમાં સમરાદિત્યનો આત્મા શિલિકુમાર અને અગ્નિશર્માનો જીવ જાલિની તરીકે જન્મે છે. કૌશાબીનગરીમાં ઈન્દુશર્મા બ્રાહ્મણને ત્યાં શુભંકરાની કુક્ષીએ જાલિનીનો જન્મ થયો છે ને ઉચિતવયે બુદ્ધિસાગર નામના મંત્રીના પુત્ર બ્રહ્મદત્ત સાથે તેને પરણાવી છે. દેવલોકથી ચ્યવીને તે જાલિનીની કુક્ષીએ ગુણસેનનો જીવ અવતરે છે. પુણ્યાત્માના પ્રભાવે માતાને સુન્દર સ્વપ્ન આવે છે પણ તેનું તે બહુમાન કરી શકતી નથી, વારંવાર ગર્ભનાશની ઈચ્છા કર્યાં કરે છે.

ગર્ભપ્રભાવે સુન્દર દોહદ જાગે છે, બ્રહ્મદત્ત તે પૂરે છે. બ્રહ્મદત્તને સ્ત્રીની ભાવનાની ખબર પડે છે એટલે તે પૂરેપૂરી સાવચેતી પૂર્વક બાઝકને બચાવી લે છે. જન્મ પછી બીજે સ્થલે ઉછેરે છે ને તેનું 'શિખી' નામ રાખે છે.

વચત જતાં જાલિનીને ખબર પડે છે ને શિખીને પળ બધી વાતની જાણ થાય છે. જાલિનીની ઈચ્છા તો તેને જીવતો જવા દેવાની નથી છતાં તત્કાલ તો તેને દૂર કરવાના સર્વ પ્રયત્નો કરે છે.

શિખિકુમારને ઘણું દુઃખ થાય છે. તે નગર બહાર જાય છે ને વિજયસિંહ નામે આચાર્ય મહારાજના સમાગમમાં આવે છે સંયમ લેવા તત્પર થાય છે ને સુન્દર રીતે સંયમ સ્વીકારે છે. સંયમ માર્ગમાં ઘણા જ આગઝ વધે છે. જાલિની સતત તેનું ધરાવ કરવાના વિચારો સેવ્યા કરે છે. એકદા મુનિને પોતાને ત્યાં પધારવાનો સંદેશ કહેવડાવે છે.

શિખિમુનિ કેટલાએક મુનિઓ સાથે કૌશાંબી પધારે છે. માતાને ધર્મોપદેશ આપે છે. માયાવિની માતા વિશ્વાસ પમાડવાની ધાતર અનેક વ્રત-નિયમો લે છે પુત્રને પોતાને ત્યાં ભોજન કરવા આગ્રહ કરે છે પણ મુનિધર્મની વિરુદ્ધ હોવાથી શિખિમુનિ ના પાડે છે.

એકદા પર્વને પારણે પ્રાતઃકાલમાં જ ઊઠીને કંસાર અને વિષમિશ્રિત મોદક લઈને ઉદ્યાનમાં જાય છે અને ત્યાં વપરાવવાનો હઠાગ્રહ છે. માતૃસ્રેહથી વિવશ બનીને અકલ્પ્ય જાણતા છતાં વહોરે છે ને શિખિમુનિ બ્રહ્મદેવલોકમાં દેવ થાય છે. આત્મચિંતવના કરતાં કરતાં કાઝધર્મ પામીને શિખિમુનિ બ્રહ્મદેવલોકમાં દેવ થાય છે ને જાલિનીનો જીવ દુધ્યાને મરીને બીજી નારકીમાં નારકપણે ઉપજે છે. એ રીતે લીજો ભવ પૂર્ણ થાય છે.

અન્તરકથા તરીકે આવતી વિજયસિંહ આચાર્યની કથા કેવા કેવા અનર્થો કરાવે છે અનેક અનેક ભવો સુધી તેથી આત્માને કેટલું સહન કરવું પડે છે તેનો સુન્દર ચિતાર ટાંચો કરે છે.

પ્રસંગોપાત આચાર્યશ્રીએ આ કથામાં કરેલું નાસ્તિકવાદનું નિરસન પણ સચોટ અને મનનીય છે. દાનાદિ ચાર ધર્મોનું વર્ણન પણ વિશદ છે. તેમાં પણ દાનના પ્રકારો અને તેની સફલતા વિસ્તારપૂર્વક આ કથામાં છે.

જેમ મહાશ્રીમંતનો પરિવાર દરેક પ્રસંગે જુદા જુદા મનોહર અલંકારોથી વિભૂષિત થઈને જનસમાજના નયન મનને આકર્ષતો હોય છે તે જ પ્રમાણે અહીં પણ જુદા જુદા પ્રસંગે નવીન રીતે ઘડાયેલા વિવિધ અલંકારો ચિત્તને અપૂર્વ રીતે રેંચી લે છે.

શ્રુતસાગર

61

નવમ્બર-૨૦૧૪

ચોથો ભવ:-

સિહિ-જાલિણિમાઙ્ગુસુયા, જં ભણિયમિહાસિ તં ગયમિયાણિં।

વોચ્છામિ સમાસેણં, ધણ-ધણસિરિમોય પઙ્ગુભજ્જા ॥

ए गाथाथी अनुसन्धान करीने आ चोथा भवमां धन अने धनश्रीनुं चरित्त वर्णव्युं छे. सुशर्मनगरमां सुन्धवा नामे राजा छे, ने वैश्रमण नामे एक महाश्रीमंत सार्थवाह छे. तेने श्रीदेवी नामे धर्मपत्नी छे. धनदेव यक्षनी पूजा करीने संतान याचे छे. ने शिखिनो आत्मा ब्रह्मदेवलोकोथी च्यवीने ते श्रीदेवीनी कुक्षीए अवतरे छे. जन्म थाय छे ने पुत्रनुं नाम 'धन' एवुं राखवामां आवे छे. ए ज नगरमां पूर्णभद्र शेठने त्यां गोमतीनी कुक्षीए जालिनीनो जीव स्त्रीपणे जन्मे छे ने तेनुं नाम धनश्री राखवामां आवे छे. कर्मयोगे धन अने धनश्रीना विवाह थाय छे.

अग्निशर्मा-तापसना भवमां एक संगमक नामनो तापस हतो, ते पण परिभ्रमण करतो अहीं नन्दक नामे दास थयो छे, ते धनने घरे नोकरी करे छे. तेनो परिचय धनश्रीने खूब रुचे छे ने छेवटे तेनी साथे ते वधु पडता संबंधमां मुकाय छे. एक दिवस कोई एक श्रेष्ठीने खूब दान देता जोईने धनना हृदयमां परदेश जईने खूब कमाईने आवुं दान देवुं-एवी भावना जागृत थाय छे. मातापितानी अनुमति मेळवी कमाववा माटे नीकळे छे. नन्दक अने धनश्री पण साथे जाय छे. तेनो नाश करवा माटे धनश्री घणा उपायो रचे छे. कामण करीने पेटनो विचिल्ल व्याधि करे छे. प्रसंगे समुद्रमां नाखी दे छे ने सर्वस्व लईने चाल्या जाय छे.

भाग्ययोगे धन बची जाय छे. कर्मयोगे अनेक सुखदुःखनो अनुभव करतो छेवटे धन सार्थवाह खूब धन कमाईने पोताना नगरमां पाछो फरे छे. मातापिता बधी वात पूछे छे. धनश्रीनी हकीकत पूछे छे पण ते कांई कहेतो नथी. छेवटे जाणे छे त्यारे बधाने ते स्त्री उपर धिक्कार उपजे छे. धन नगर बहार जाय छे. त्यां यशोधर आचार्यनो समागम थाय छे. तेमनु चरित्त सांभळीने भवनिर्वेद जागे छे, मातपिताने समजावीने तेओने साथे लईने संयम ले छे.

श्रुतज्ञाननो सुन्दर अभ्यास करी संयमस्थिर बनी एकला विहारनी प्रतिमा धारण करीने विहार करे छे विहार करतां कोशांबी नगरीए जाय छे. नन्दन अने धनश्री पण ते ज कौशांबी नगरीमां रहे छे. धनमुनि तेने त्यां वहोरवा जाय छे स्त्री तेने ओळखे छे ने मारी नाखवानो विचार करती ते क्यां छे तेनी तपास करवा दासीने मोकले छे. राते त्यां जईने मुनिनी आसपास लाकडा खडकीने सळगावी मूके छे शुभध्याने काळ करीने

મુનિ શક્ત્રદેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે. પાછલ્લથી ધનશ્રી પકડાય છે ને નન્દક નાસી છૂટે છે. બધી વાત ફૂટે છે, સ્ત્રીને અવધ્ય જાણીને હાંકી કાઢે છે. જતાં જતાં સર્પદંશ થાય છે ને મરીને વાલુકાપ્રભા નારકીમાં જાય છે.

આ વિભાગમાં પ્રાસંગિક એક પુરોહિતના પૂર્વભવોનું વર્ણન અને યશોધર આચાર્યનું ચરિત્ર ઘણું જ રોચક અને વૈરાગ્યરસથી ભરપૂર છે. યશોધરચરિત્ર તો જુદું સ્વતંત્ર પળ પ્રસિદ્ધ છે. કથાવસ્તુ અને વર્ણન શૈલી એવો તાદાત્મ્યભાવ જન્માવે છે કે તેના સંસ્કારો આત્મામાં ચિરકાલ સુધી સ્થિર રહે. આ ભવ વાંચવાની શરૂઆત ન કરી હોય ત્યાં સુધી ઠીક પળ શરૂ કર્યા પછી તેની પકડ એવી મજબૂત બને છે કે તે પૂર્ણ થાય ત્યારે જ તેમાંથી મુક્ત થવાય છે.

નીચેની ગાથાથી પૂર્વનું અનુસંધાન કરીને કથા આગલ વધે છે.

પાંચમો ભવ:-

વક્ષ્યાયં જં ભણિયં ધણધણસિરિમો ય એત્થ પડ્ધજ્જા ।

જયવિજયા ય સહોયર, એત્તો એયં પવક્ષ્યામિ ॥૧॥

કાકંદી નામે નગરી છે. સૂરતેજ નામે રાજા રાજ્ય કરે છે. લીલાવતી પટ્ટરાણી છે. ધનનો આત્મા તે રાજાને ત્યાં જન્મે લે છે. જયકુમાર એવું નામ સ્થાપન કરવામાં આવે છે. અનેક કલ્લાઓ શીખે છે તેમાં ધર્મકલ્લા તો તેને સ્વાભાવિક વરી છે. ધનશ્રીનો જીવ પરિશ્રમણ કરતાં કર્મસંયોગે જયકુમારના ભાઈ તરીકે જન્મ લે છે ને તેનું નામ વિજયકુમાર રાખવામાં આવે છે.

રાજાના મરણ પામ્યા બાદ રાજા તરીકે જયકુમારનો અભિષેક કરવામાં આવે છે. આ પ્રસંગ વિજયકુમારના સ્વાભાવિક દ્વેષમાં અભિવૃદ્ધિ કરે છે. અને તે રાજ્યના પ્રતિપક્ષી માણસો સાથેનો સમાગમ કર્યા કરે છે. મહારાણી લીલાવતી જયકુમારને કહે છે કે વિજયકુમારને સંતોષ થાય એવું કાંઈક કરો, એટલે રાજા જયકુમાર આત્મકલ્યાણમાં પ્રબલ અંતરાયભૂત રાજ્ય છે એમ જે સ્વભાવથી જ માને છે તેને પ્રસંગ મળે છે એટલે સ્વયં પોતે જ વિજયકુમારને બોલાવીને તેનો રાજ્યાભિષેક કરે છે, માતા અને પ્રધાન પુરુષ સહિત જયકુમાર સનત્કુમાર આચાર્ય મહારાજ પાસે સંયમ સ્વીકારે છે.

જેને સતત મારી નાખવાની ઇચ્છા રાખતો હતો-તે આમ સુંદર રીતે દીક્ષા લઈને લોકચાહના સાથે જીવતો ચાલ્યો જાય છે એ વાત વિજયકુમારને રુચતી નથી પળ

श्रुतसागर

63

नवम्बर-२०१४

हवे शुं थाय? छतां ज्यारे त्यांथी मुनिओए विहार कर्यो त्यारे जयकुमारने मारवा माटे माराओ मोकल्या पण विना कारण आवुं पापाचरण करवुं ए सर्वथा अकरणीय छे एम समजीने मार्या वगर ज माराओए राजाने मारी नाख्यानुं कहीने संतोष पमाड्यो. वर्षो वीती गयां ने एकदा जयकुमार मुनि काकंदी पधार्या. लोको खुश थया ने विजयकुमार फरी बळवा लाग्यो.

तेणे माराओने बोलाव्या ने पूछ्युं के तमे तो तेने मारी नाख्यो हतो ने आ जीवतो क्यांथी आव्यो? तेओए खोटे खोटुं कहुं के अमने कांई खबर न पडी के कोण जयकुमार छे? अमे तो गमे ते साधुने जयकुमार मानीने हण्यो हतो. साधु तो बधा सरखा लागता हाता. पछी विजयकुमार जयकुमार मुनि पासे जईने वांदी धर्मश्रवण करीने तेओ क्यां रहे छे ईत्यादि सर्व ध्यानमां राखीने आवे छे. रात्रिए एकलो जईने जयकुमार मुनिने तलवारथी हणे छे. बीजा मुनिओ तेने ओळखी जाय छे ने सकरे विहार करी जाय छे. काळधर्म पामीने जयकुमार आनत देवलोके १८ सागरोपमना आयुष्यवाळा देव थाय छे. दुष्ट परिणामे मरीने विजयकुमार पंकप्रभा नारकीमां दस सागरोपमनी स्थितिवाळो घोर नारक थाय छे.

आ पांचमां भवमां जय-विजयनी कथा तो आम तद्दुन नानी छे पण सनत्कुमार आचार्यश्रीनुं आत्मवृत्त विस्तारथी छे. साहित्यशास्त्रना अनेक प्रकारो समजावतुं अने कथानो रस जमावतुं ए वृत्त अनेक रसमां तरबोळ करे छे. कामनी परवशता, युवतिवर्णन सात्त्विक आत्माओनी सात्त्विकता, कर्मजनित सुखद अने दुःखद प्रसंगोनी परंपरा, शृंगार, अद्भुत, वीर, करुण-रसो अंगांगीभाव धारण करता करता छेवटे शांत रसमां एवी सुन्दर रीते पर्यवसान पाम्या छे के जेनुं चित्रण चित्त फलक उपर चिरस्थायी बनी जाय छे.

स्वल्प पण दुष्कृत केवा कटुक विपाकने आपे छे ए वात आ वृत्त जाण्या पछी दृढ थई जाय छे. आ विभागमां जाणे सनत्कुमाराचार्य-नायक रूपे आवी गया होय एम क्षणभर लाग्या करे छे.

छट्टो भव:-

जयविजया स सहोयर, जं भणियं तं गयमियाणिं।

वोच्छामि पुव्वविहियं, घरणो लच्छी य पइभज्जा।।१।।

ए गाथाथी पूर्वानुसंधान करीने कथा आगळ वधे छे.

માકંદી નામે નગરી છે. કાલમેઘ રાજા રાજ્ય કરે છે. ત્યાં બંધુદત્ત શેઠ અને શેઠનાં ધર્મપત્ની હારપ્રભા વસે છે. જયનો આત્મા હારપ્રભાની કુક્ષિએ જન્મ લે છે ને તેનું નામ 'ધરણ' રાખવામાં આવે છે. વિજયનો જીવ પરિભ્રમણ કરતાં કરતાં કાલક્રમે તે જ નગરીમાં કાર્તિક શેઠને ત્યાં જયાની કુક્ષિએ જન્મ લે છે ને પુત્રી રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે. તેનું લક્ષ્મી એવું નામ રાખવામાં આવે છે. ભવિતવ્યતા યોગે ધરણ અને લક્ષ્મીના વિવાહ થાય છે. એક પ્રસંગવિશેષને લઈને ધરણને ચાનક ચડે છે. ને તે સાર્થ લઈને પરદેશ કમાવા માટે જાય છે.

અટવીમાંથી પસાર થતાં એક વિદ્યાધરને તેની આકાશગામિની વિદ્યાનું પદ સંભારી આપવાને કારણે મૈત્રી થાય છે, વિદ્યાધર ધરણને સંરોહિણી વનસ્પતિ આપે છે. આગલ વધતા એક પલ્લિપતિને આ વનસ્પતિના પ્રભાવે જીવિતદાન આપે છે. ત્યાંથી આગલ એક નગરના પાદરમાં મૌર્ય નામના ચંડાલને બચાવે છે.

આમ અનેક ઉપર ઉપકાર કરવા; એ એનું વ્યસન બની જાય છે. વ્યાપારમાં સારું ધન ઉપાર્જન કરીને પોતાના નગર તરફ પાછો ફરે છે. જે અટવીમાંથી પ્રથમ પસાર થયો હતો તે જ કાદંબરી અટવીમાંથી ફરી પસાર થતાં ભિલ્લો તેના સાર્થને લૂંટે છે. અને સર્વ છિન્ન-ભિન્ન થઈ જાય છે. ધરણ અને લક્ષ્મી સાર્થથી છૂટા પડી જઈને ક્યાંના ક્યાંય નાસી જાય છે.

અટવીમાં લક્ષ્મીને તૃષ્ણા અને ક્ષુધા લાગે છે. ધરણ વનસ્પતિના પ્રભાવે પોતાનું રુધિર અને માંસ તેને આપે છે. આવો તો એક પાક્ષિક સ્નેહ છે. જેવો ધરણમાં સ્નેહ છે, તેવો જ સામે દ્વેષ છે, પ્રતિક્ષણ ધરણના દુઃખે લક્ષ્મી રાજી થાય છે. નાસતા ભાગતા તે બન્ને એક નગરે પહોંચે છે. ત્યાં નગર બહાર એક દેવકુલિકામાં રાત રહ્યા છે. ત્યાં એક ચોર આવી ચડે છે. તેની સાથે લક્ષ્મી જાય છે ને ધરણને માથે ચોરીનું આલ ચડે છે.

તેમાંથી મૌર્ય તેને બચાવ્યો છે ને ફરી પાછી લક્ષ્મી તેને મળે છે. ત્યાંથી અનેક દુઃખો સહન કરતાં ફરી કાદંબરી અટવીમાં આવી ચડે છે. ભિલ્લપતિનો સમાગમ થાય છે. તે ઓલ્લખે છે ને પોતાના અકૃત્યનો ખૂબ પશ્ચાત્તાપ કરતો તે ધરણને સર્વસ્વ સમર્પિને વિદાય આપે છે. ધરણ પોતાને નગર આવે છે.

કેટલાક સમય બાદ ફરીથી ધરણ પરદેશ કમાવા નીકળે છે. લક્ષ્મી પણ સાથે જ છે. ધનના અધિક લાભ માટે સમુદ્રયાત્રા કરે છે. વહાણ ભાંગે છે, હાથમાં પાટિયું આવે છે ને ધરણ તરતો તરતો સુવર્ણદ્વીપ પહોંચે છે. ધીન તરફથી આવતો એક સુવદન શ્રેષ્ઠીપુત્ર ત્યાં આવે છે. તેની સાથે ધરણ જાય છે પણ સુવર્ણદ્વીપની દેવી કોપે છે ને ધરણ

શ્રુતસાગર

65

નવમ્બર-૨૦૧૪

તેનો ભોગ બને છે. લક્ષ્મી સુવદન સાથે ભઠ્ઠી ગઈ છે, તે રાજી થાય છે.

ત્યાંથી ધરણને પૂર્વ પરિચિત વિદ્યાધર છોડાવે છે. સારસંપત્તિ આપીને ઈચ્છિત સ્થળે પહોંચાડે છે. સુવદન અને લક્ષ્મી ત્યાં આવે છે અને તેઓ ત્યાં ધરણને જુએ છે. તે બન્નેના પેટમાં કઠ્ઠકઠ્ઠતું તેલ રેડાય છે છતાં તે પાપીઓ પાપ છોડતા નથી. રાજદરબારે વાત પહોંચે છે. છેવટે બધું સુલ્લુ પડે છે. ધરણ બન્નેને જીવતા જવા દે છે.

અહીં ધરણ ઉપર ટોપ્ય શેઠ સારી સજ્જનતા દાખવે છે. છેવટે ધરણ પોતાને ગામ આવે છે. સંસારની અનેક વિચિત્રતાઓ જોઈને તેનું મન સ્વાભાવિક રીતે સંવેગ તરફ વળે છે.

તેમાં અર્હદ્વત્ત આચાર્યશ્રીનો સંયોગ સાંપડે છે. તેમની વાત સાંભળીને તો તેના સંવેગની ભૂમિકા નવપલ્લવિત બને છે ને તેમની પાસે અનેક મિત્રો સાથે સંયમ લે છે. પછી વિહાર કરતા કરતા ધરણ મુનિ તામ્રલિપ્તી નગરીએ જાય છે. ત્યાં સુવદન અને લક્ષ્મી રહ્યાં છે. લક્ષ્મી ધરણ મુનિને જુએ છે ને તેનો વિદ્વેષ પ્રજ્વલી ઊઠે છે, તે મુનિ ઉપર ચોરીનું આઠ ચડાવે છે.

નગરરક્ષકો મુનિને પકડે છે, મુનિ મૌન રહે છે, મુનિને શૂલીએ ચડાવે છે. શૂલી તૂટી પડે છે, રાજા વગેરે ત્યાં આવે છે, લક્ષ્મી નાસી છૂટે છે સુવદન બધી વાત કરે છે. પાપનો ક્ષય અને ધર્મનો જય થાય છે. સુવદન દીક્ષા લે છે. સંયમનું યથાવિધિ પરિપાલન કરતા ધરણ મુનિ કાઠધર્મ પામીને આરણ દેવલોકે એકવીસ સાગરોપમ સ્થિતિવાળા દેવ થાય છે. બૂરે હાલે મરીને લક્ષ્મી ધૂમપ્રભા નારકીમાં ૧૭ સાગરોપમના લાંબા આયુષ્યવાળા નારક તરીકે ઉપજે છે.

આ પ્રસંગ જરા વિસ્તારથી જણાવ્યો છે પણ આ કથા આ વિભાગમાં એટલી સ્ત્રીલી છે કે વિસ્તાર પણ ઘણો ટૂંકો હોય એમ લાગે છે. આચાર્ય અર્હદ્વત્તનું ચરિત્ર તો ઘણું જ રમ્ય અને ભવનિર્વેદની ભારોભાર મહત્તા સમજાવતું રસમય બન્યું છે. તેમાં આવતાં રૂપકો તો વાંચ્યા પછી મનમાં રમી રહે છે.

સંસારનું સ્વેચ્છાણ કેટલું છે તેમાંથી છુટવું કેટલું મુશ્કેલ છે તેનો ચિતાર આ ચરિત્ર કરાવે છે. સજ્જનોની સજ્જનતા અને દુર્જનોની દુર્જનતા કેવી હોય છે તે આ વિભાગમાં જણાવી છે. આપત્તિમાં આવેલો સજ્જન અધિક સુજનતા દાખવે છે. અગ્નિમાં પડેલ કાલાગુરુ ધૂપ અપૂર્વ સુગન્ધ પ્રસરાવે છે. તેનો સાક્ષાત્કાર ધરણ કરાવે છે:

આપદ્રતઃ ખલુ મહાશયચક્રવર્તી,
વિસ્તારયત્યકૃતપૂર્વમુદારભાવમ્ ।

SHRUTSAGAR

66

NOVEMBER-2014

કાલાગરુર્દહનમધ્યગતઃ સમન્તાઃ
લ્લોકોત્તરં પરિમલં પ્રકટીકરોતિ ॥૧॥

સાતમો ભવ:-

પૂર્વાનુસંધાન ગાથા આ પ્રમાણે છે:

વક્ષ્યાયં જં ભણિયં, ધરણો લક્ષ્મી ય તહ ય પદ્મજ્જા।
એત્તો સેણવિસેણા, પિત્તિયપુત્ત ત્તિ વોચ્છામિ ॥૧॥

ચંપા નામે નગરી છે. અમરસેન રાજા છે. જયસુન્દરી મહારાણી છે. જયસુન્દરીની કુક્ષિએ ધરણ જન્મે છે, ને તેનું નામ 'સેન' રાખવામાં આવે છે. વક્ત જતાં લક્ષ્મીનો જીવ મહારાજાના નાના ભાઈ યુવરાજ હરિષેણને ત્યાં તારપ્રભાની કુક્ષિએ પુત્ર પળે જન્મ લે છે તેનું નામ 'વિષેણ' રાખવામાં આવે છે.

એક કેવલી સાધ્વીજીની આત્મકથા સાંભળીને ઘણાં પૌરજન સહિત રાજા અમરસેન પુરુષચંદ્રગણી પાસે દીક્ષા લે છે ને હરિષેણ રાજા થાય છે. પરમ સજ્જન સ્વભાવે અને પ્રકૃષ્ટ પુણ્યોદયને લઈને સેનકુમાર રાજા પ્રજા અને સકલ પરિવારને પૂર્ણ પ્રીતિપાત્ર છે.

ફક્ત વિષેણને છોડી દઈને જેમ જેમ સેન તરફનું આકર્ષણ સર્વનું વધતું જાય છે. તેમ તેમ વિષેણનો વિપરીત ભાવ પણ વધતો જાય છે. વિષેણ સેનને મારી નાશવા મારા મોકલે છે પણ તેઓ પકડાઈ જાય છે ને બાજી ડંધી વઢે છે.

રાજા હરિષેણને પોતાના જ પુત્ર પર ઘણો ક્રોધ આવે છે પણ સેનકુમાર પોતાના અપૂર્વ સૌજન્યથી એ સર્વનું સાન્ત્વન કરે છે. કેટલાંક કાઠ પછી જાતે જ વિષેણકુમાર સેનકુમારને મારવા ઉદ્યત થાય છે પણ તે ફાવી શકતો નથી. સ્વચ્છ હૃદયના સેનકુમારને વિષેણ શા કારણે આમ કરતો હશે તે સમજાતું નથી.

તે પોતાની પ્રિયા સાથે રાજ્ય છોડી ચાલી નીકળે છે. પ્રવાસના અનેક કષ્ટોને અનુભવતા તેઓ આગળ વધે છે. પ્રિયતમાનો વિયોગ થાય છે ને છેવટે પ્રિયમેલકતીર્થ તેમનો સમાગમ કરાવે છે ને પર રાજ્યમાં પણ પરમ આહ્વાદ અનુભવે છે. પોતાના રાજ્યની સ્થિતિ વિષેણના હાથે વિષમ બની છે. તે સુધારવા પ્રયત્ન કરે છે છતાં પ્રયત્નો કારણત નિવડતા નથી.

હરિષેણ આચાર્ય કે જેઓ સંસાર પક્ષે પોતાના કાકા થાય છે. તેઓને મુખે કર્મ અને સંસારની વિચિત્રતાઓ સાંભળીને સેનકુમાર, શાન્તિમતિ પ્રિયા અને મંત્રી આદિ

શ્રુતસાગર

67

નવમ્બર-૨૦૧૪

પરિવાર સહિત પ્રવ્રજ્યા સ્વીકારે છે.

વિહાર કરતા કોલ્લાક ગામે રાતે પ્રતિમા ધ્યાને સેનમુનિ રહ્યા છે ત્યાં રાજ્યભ્રષ્ટ વિષેણકુમાર પોતાના કેટલાક દુષ્ટ મિત્રો સહિત આવે છે, ને સેનમુનિને મારવા ઉદ્દત થાય છે પણ ક્ષેત્રદેવતા તેને વારે છે ને છેવટે ત્યાંથી દૂર અવગ્રહ બહાર મૂકી આવે છે.

મિલ્લોને હાથે ભયંકર અટવીમાં મૂકે હાલ મરીને વિષેણ બાવીસ સાગરના આયુવાલો તમપ્રમા નારકીમાં નારક થાય છે, ને સેનમુનિ અનશન કરી નવમે ગૈવયકે લીસ સાગરના આયુષ્યવાલા દેવ થાય છે.

આ વિભાગમાં એક સાધ્વીજીનું તથા હરિષેણ આચાર્યશ્રીનું કથાનક ટૂંકમાં છતાં સચોટ છે. કોઈના પર આઠ ચઢાવવાનાં પરિણામ કેવાં સહન કરવાં પડે છે તે અને નાના અપરાધનો દંડ કેવો વિચિત્ર મળે છે તેનો ચિતાર એ કથાનકો કરાવે છે.

આ વિભાગમાં નૈમિત્તિકના જ્ઞાનનું સામર્થ્ય, વૃક્ષો અને તીર્થોના પ્રભાવો, મળિનું માહાત્ય, યોગીઓના આશ્રમો વગેરે વર્ણન આકર્ષક છે. નૈસર્ગિક અને પ્રાસંગિક વર્ણનોના મિશ્રણથી આ વિભાગની કથા જાણે કુદરતને ચિતરતી ન હોય એવો ભાવ જગવતી આગલ ને આગલ લઈ જાય છે.

આઠમો ભવ:-

વક્ષ્યાયં જં ભણિયં, સેણ-વિસેણા ઉ પિત્તિયસુયત્તિ

ગુણચંદ-વાણમંતર, એત્તો એયં પવક્ષામિ ॥૧॥

આ પૂર્વાનુસંધાન કરતી આ ગાથા છે.

અયોધ્યા નગરીમાં મૈત્રીબલ રાજાને ઘેર પદ્માવતી મહારાણીની કુક્ષિએ સેનનો આત્મા અવતરે છે, અને તેનું ગુણચંદ્ર એવું નામ રાખવામાં આવે છે. સકલ કલાકલાપનો અભ્યાસ કરવા છતાં કુમાર ગુણચંદ્રનું ચિત્ત સ્વભાવતઃ વિષયવિમુક્ત રહે છે. સતત ધર્મપોષક વૃત્તિ-પ્રવૃત્તિ ને વાત એ આચરે છે.

વિષેણનો જીવ વિદ્યાધરોની શ્રેણિમાં જન્મ લે છે, તે વાનમંતર નામે પ્રસિદ્ધ થાય છે. કુમારને ઉપદ્રવ આપવા વાણમંતર વિદ્યાધર ઘણા પ્રયત્નો કરે છે પણ કુમારના પુણ્ય પાસે તેનું કાંઈ ચાલતું નથી.

કુમાર ગુણચંદ્રના વિવાહ રત્નવતી સાથે થાય છે પછી પણ પ્રસંગે પ્રસંગે વિદ્યાધર વાનમંતર કુમારનું બૂરું કરવાના સતત પ્રયત્નો કર્યા કરે છે. સતત વધતા પુણ્યોદયને ભોગવતો કુમાર રાજા થાય છે ને પૃથ્વીનું ન્યાયપુરસ્સર પરિપાલન કરીને સંયમ સ્વીકારે છે.

छेवटे पण वानमंतर उपसर्ग करे छे ने नरकायु बांधीने अति रौद्रध्याने मरीने महातमा नामे सातमी नारकीमां ३३ सागरना आयुष्यवाळो नारक थाय छे. शुभ-ध्यान करी आयुष्य समाप्त करीने मुनि गुणचंद्र सार्थसिद्ध विमानमां ३३ सागरोपम आयुःवाळा देव थाय छे.

आ विभागमां प्रहेलिका आदि कूटकाव्यनी रचना रसमय अने आकर्षक छे. वचमां थोडो समय शृंगाररसे जाणे पोतानुं साम्राज्य जमाव्युं होय एम लागे छे. आचार्य विजयधर्मनुं कथानक गाथाबद्ध प्रवाहमां गुंथायुं छे.

साध्वीजीनी कथा पण भाववाही छे. ते ते कथाओनी खूबी एवी छे के ज्यारे तेनुं वाचन चालतुं हो त्यारे वाचक तन्मय बनीने रसास्वाद माणतो होय एवो अनुभव थाय छे. तेने वाचक भिन्न छे एवी वृत्तिनुं विस्मरण थई जाय छे. काव्यनी खरी खूबी पण तेमां ज छे.

नवमो भवः-

गुणचंद्र-वाणमंतर, जं भणियमिहासि तं गयमियाणि।

वोच्छामि जमिह सेसं, गुरूवएसाणुसारेणं ॥१॥

उज्जयिनी नगरी छे. पुरुषसिंह राजा छे. सुन्दरी महाराणी छे. गुणचंद्रनो आत्मा महाराणीनी कुक्षिए जन्म ले छे. आ जन्म लेवानुं ते आत्माने छेल्लुं छे. राजपुत्रना जन्मोचित सर्व कार्यो उत्तम प्रकारे करे छे ने पुत्रनुं नाम 'समरादित्य' राखवामां आवे छे.

वानमंतरनो जीव नरकमांथी नीकळी परिभ्रमण करतो ग्रन्थिकने त्यां यक्षदेवानी कुक्षिए पुत्रपणे जन्मे छे ने 'गिरिषेण' एवुं तेनुं नाम पाडवामां आवे छे. अनेक भवोथी आत्माने संस्कारित करता समरादित्यना आत्मानुं वलण आ भवमां सतत धर्म तरफ ज रहे छे. संसारनी के रंगरागनी वृत्ति के वात तेने जरी पण रुचती नथी. राजा वगरे मोहवश ईच्छे छे के कुमार भोगविलासमां रक्तने सक्त बने तो सारं.

ते माटे अशोक वगरे एवा मिलोने पण कही राखे छे के तमे कुमारनी चित्तवृत्तिने मोहित करो, परंतु ते मिलो पण कुमारना परिचयथी ने प्रभावथी ऊलटा तेना मतमां मळी जाय छे. राजा प्रसंगे प्रसंगे घणी घणी मोहक साधनसामग्री कुमार माटे योजे छे पण तेमां तेनुं मन ललचातुं नथी ते तो वैराग्य तरफ वधु ने वधु खेंचातो जाय छे. अहीं कुमारना वर्तनमां खरेखर देखाई आवे छे के-

શ્રુતસાગર

69

નવમ્બર-૨૦૧૪

વિકાર હેતૌ સતિ વિક્રમ્યન્તે, યેષાં ન ચેતાંસિ ત એવ ધીરાઃ ।

-વિકારના કારણો છતાં જેઓનાં મન વિકારને પામતાં નથી તેઓ જ યેરેયર ધીર છે.

વ્યાધિ, વૃદ્ધાવસ્થા અને મૃત્યુ એ ત્રણ કેવાં અપ્રતિકાર્ય છે તેનું ચિત્તણ એટલું સુન્દર છે કે ચિત્તફલક પર એ ચિત્તણ ચઢ્યા પછી નથી તો જ્ઞાંતું પડતું કે નથી તો દૂર યસતું. પિતાના આગ્રહથી કુમાર વિલાસવતી અને કામલતા નામે બે રાજકુમારીઓ સાથે વિવાહ કરે છે.

કુમારને આકર્ષવાને બદલે બન્ને કુમારીઓ કુમારના વિચારમાં રંગાઈ જાય છે. વિષયાધીન આત્માના વિરૂપ વિપાકનું જે વર્ણન કુમારે તે બન્નેને કહ્યું તેની ડુંડી અસર તેના ઉપર પડી અને યાવજ્જીવ બ્રહ્મચર્યવ્રતનું પરિપાલન કરવાનો સર્વેએ દૃઢ નિશ્ચય કર્યો. દેવોએ પણ તેઓના તે નિર્ણયને અનુમોદ્યો.

રાજા-રાણી પણ છેવટે હર્ષિત થયા. તેઓ પણ કુમાર પાસે ગયાં ને કુમારની વાત સાંભળીને સંવેગ તરફ આકર્ષાયા. સંસારની વિચિત્રતાઓની પરંપરા જ્યારે કુમાર જણાવે છે ત્યારે ભલભલાને એમ થઈ જાય છે કે આ સંસાર યેરેયર, અસાર ને દુઃખનો ભંડાર છે. પરિણામે કુમાર, માતા-પિતા, સ્ત્રીઓ, મિત્રાદિ સર્વ સ્વજન-સંબંધીઓ સાથે પ્રભાસ નામના આચાર્ય મહારાજ પાસે મહામહોત્સવ પૂર્વક સંયમ સ્વીકારે છે.

રાજા પોતાના ભાણેજને રાજ્ય સોંપે છે. પુરજન માત્ર આનંદિત થાય છે. ફક્ત એક ગિરિષેણના હૃદયમાં અકારણ દ્વેષ જાગે છે ને તે કુમારને મારવાની વિચારણા કર્યા કરે છે. વચ્ચે જતાં અનેક શિષ્ય પરિવાર સમેત સમરાદિત્ય મુનિ અયોધ્યા નગરીએ પધારે છે.

રાજા અને નગરજનો દર્શન વંદન માટે આવે છે ને દેશનામાં એટલા તાત્ત્વિક ભાવો સમજાવે છે કે જે અનેક તત્ત્વગ્રન્થો જેવા છે. કાલચક્રનું સ્વરૂપ, કર્મની પરિસ્થિતિ, કર્મબંધના હેતુઓ, મુનિધર્મની મહત્તા इत्यादि અનેક વિષયો આવે છે. એ પ્રમાણે અનેક આત્માને પ્રતિબોધ કરતા સમરાદિત્ય મુનિ ગામાનુગામ વિહાર કરતાં અવંતી પધારે છે.

ત્યાં એકદા એકાંતમાં પ્રતિમા ધ્યાને રહ્યા છે. મુનિની પાછલ પહેલો ગિરિષેણ પણ ઠીક અવસર મલ્લો એમ વિચારી ધ્યાને રહેલા મુનિના શરીર ઉપર આજુબાજુથી ચીંધરાં વીળી લાવીને વીંટે છે. તે ઉપર અલ્પસીનું તેલ છાંટે છે ને પછી અગ્નિ ચાંપે છે. ધ્યાનની ધારાએ ચઢેલા મુનિને શરીરની પરવા નથી. તેઓ તો ક્ષપકશ્રેણિ ઉપર આરૂઢ થાય છે ને ઘાતિકર્મનો ક્ષય કરી કેવલજ્ઞાન પામે છે.

वेलन्धर देव सपरिवार त्यां आवे छे ने अग्नि होलवी नांखीने मुनिना शरीर उपरनां चीथरां दूर करे छे. राजा वगैरे त्यां आवी चडे छे. वातनी जाण धाय छे. गिरिषेण पण हृदयमां शरमाय छे. पोताना अपकृत्य माटे, मुनिनी महानुभावता तेना हृदय उपर असर करी जाय छे ने ते चाल्यो जाय छे.

समरादित्य केवली धर्मदेशना आपे छे. नरक-गतिनां दुःखो अने देवलोकनां सुखो केवां छे ते समजावे छे ने पछी मोक्षनां सुखो केवां अनुपमेय छे तेनुं वर्णन भिल्ल अने नगर सुखना उपनयवाळा दृष्टांतथी वर्णवे छे. छेवटे वेलन्धर देव आ उपसर्गनुं कारण पूछे छे. त्यारे केवली भगवंत सर्व संबंघ कहे छे. गिरिषेणनो आत्मा असंख्याता पुद्गल परावर्तो पछी सम्यक्त्व पामशे एम जणावे छे.

अत्यारे तो तेणे गुण पक्षपात बीज प्राप्त कर्तुं छे ते बीजक तेनी सम्यक्त्व प्राप्तिमां परंपराए कारणभूत बनशे. समरादित्य केवली भगवंत त्यांथी विहार करी जाय छे. गिरिषेण भूडे हाले मरीने सातमी नरके उत्कृष्ट आयुष्यवाळा नारक तरीके उपजे छे ने शैलेशीकरण करी बाकीनां चार अघाती कर्मनो अंत करीने समरादित्य केवली भगवंत सिद्धिगतिना शाश्वत सुखना भोगी बने छे.

कर्मना सकंजामां सपडायेलो एक आत्मा अनंतकाळ संसारमां भमे छे अने कर्मनी सामे झड्डूमतो अन्य आत्मा उत्तरोत्तर प्रशमभावमां आगळ वधतो अनंत संसारनो अंत साधी सिद्धि मेळवे छे ते आ चरित्रमां स्पष्ट छे. चरित्रकार पूज्य हरिभद्रसूरिजी महाराज पण ग्रन्थ समाप्ति करतां आशीर्वाद आपे छे के-

जं विरइऊण पुण्णं, महाणुभावचरियं मए पत्तं।

तेण इहं भवविरहो, होउ सया भवियलोयस्स ॥

महानुभाव (समरादित्य) नुं आ चरित्र रचीने में जे पुण्य प्राप्त कर्तुं होय तेथी भव्य लोकोने सदा भवनो विरह थाओ. आम उपसंहारमां 'विरह' पद के जे आ सर्व रचनामां बीजभूत बन्युं छे ते पण सुन्दर रीते योज्युं छे. आपणे पण आवां चरित्रो द्वारा भवविरहने इच्छीए.

कथामांथी केटलीक समजाती वातो

आ समराइच्चकहा ए एक काव्य ग्रन्थ होवा छतां तेमांथी प्रासंगिक अनेक विषयो जाणवा मळे छे. जैन दर्शननुं तत्त्वज्ञान स्थळे स्थळे मुनिवरोनी देशनामां

શ્રુતસાગર

71

નવમ્બર-૨૦૧૪

ઘણું જ આવે છે. વ્યવહારના અને મુનિ જીવનના આચારો અને પ્રક્રિયા પળ આ કથા વ્યવસ્થિત સમજાવે છે.

શ્વેતામ્બર મૂર્તિપૂજક જૈન મુનિઓમાં 'ધર્મલાભ' એ પ્રમાણે આશીર્વચન બોલવાનો વર્તમાનમાં પળ વ્યવસ્થિત ચાલુ વ્યવહાર છે. આ કથામાં સેંકડો વચ્ચત મુનિઓએ આશીર્વચન ઉચ્ચાર્યાના ઉલ્લેખો છે એટલે વર્તમાનમાં પ્રચલિત આશીર્વચન શ્રી હરિભદ્રસૂરિજી મ. ના સમયમાં પળ પ્રચલિત હતું એ નિર્વિવાદ છે અને તેઓશ્રીના ઉલ્લેખ પ્રમાણે તો આશીર્વચન જ સનાતન રૂઢ છે, અને એમ જ હોવું જોઈએ એમ બુદ્ધિને પળ સમજાય છે. આ આશીર્વચન સિવાય મુનિના મુખે શોભે એવું નિર્દોષ આશીર્વચન અન્ય કલ્પી શકાતું નથી.

કથાના અનુયાયી અને પ્રશસ્તિ

આ કથાને અનુસારે છૂટક છૂટક ઘણું લખાયું છે. શ્રીપ્રદ્યુમ્નસૂરિજી મહારાજે 'સમરાદિત્યસંક્ષેપ' શ્લોકબદ્ધ સંસ્કૃત ભાષામાં લખેલ છે. એ ગ્રન્થ પળ સંસ્કૃત કાવ્ય ગ્રન્થોમાં પ્રધાન સ્થાને મૂકી શકાય એટલું સામર્થ્ય ધરાવે છે. પં. પદ્મવિજયજી મહારાજે 'શ્રીસમરાદિત્યરાસ' ગુજરાતીમાં પદ્યબંધ લખીને પ્રાકૃત-સંસ્કૃતના અળજાળ આત્માઓ ઉપર અનુપમ ઉપકાર કર્યો છે.

રાસની રચના પળ પૂર્ણ સામર્થ્યવાળી છે. પ્રશમરસ નિતરતી આ કથા જ એવી છે કે જે એમ ને એમ અસર કરે તો પછી સમર્થ વ્યક્તિઓને હાથે લખાયેલ કેમ ન કરે? એ સિવાય ગુજરાતી ભાષામાં ગદ્યરૂપે પળ આ કથાનું પુસ્તક પ્રકટ થયેલ છે. 'વેરનો વિપાક' નામે ટૂંકમાં પળ આ ચરિત્ર ગુજરાતીમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ છે. ટૂંકા રાસરૂપે પળ રચના થઈ છે. આ કથાની પ્રશસ્તિ ગાતાં કવિવર્ય ધનપાલે 'તિલકમંજરી' માં એ રમ્ય સૂક્ત મૂક્યું છે, તે આ પ્રમાણે છે:-

નિરોદ્ધું પાર્યંતે કેન, સમરાદિત્યજન્મનઃ ।

પ્રશમસ્ય વશીભૂતં, સમરાદિત્યજન્મનઃ ॥

સમરાદિત્યથી ઉત્પન્ન થયેલ પ્રશમને અધીન થયેલું ને યુદ્ધ વગેરેને ત્યજતું મન કોના વડે રોકી શકાય? અર્થાત ન જ રોકી શકાય. કવિ ધનપાલનું ઉપરોક્ત કવન મનનપૂર્વક આ કથા વાંચ્યા પછી સર્વથા સત્ય છે એમ સહૃદયને લાગ્યા વગર રહેતું નથી.

સૂર્ય-ચન્દ્રના પ્રકાશ સુથી આ કથા અંતરને અજવાલતી રહે એજ અભિલાષા.

(જૈન સત્યપ્રકાશ, વર્ષ-૧૮ માંથી સાભાર.)

‘समयादित्य’ के नौ भवों का आकलन

भव	नाम	संबंध	क्षेत्र	नगर	अवांतर कथाएँ
१	गुणसेन-अग्निशर्मा	राजा व पुरोहित पुल	महाविदेह	क्षितिप्रतिष्ठित	वैराग्य उद्बोधक विजयसेन आचार्य का दृष्टांत.
२	सिंहराजा-आनंदकुमार	पिता-पुत्र	महाविदेह	जयपुर	भवनिवेद प्रबोधक धर्मघोषसूरिजी का दृष्टांत, मधुबिन्दु का भावपूर्ण परिचय.
३	शिखिकुमार-जालिनी	पुत्र-माता	महाविदेह	कोशाम्बी	संसारोद्देश जनक विजयसिंह आचार्य का दृष्टांत, नास्तिक मत का खंडनात्मक विवरण.
४	धन-धनश्री	पति-पत्नी	भरत	सुरार्मनगर	परिव्राजक मत का खंडनात्मक विवरण, यशोचर मुनि का कथानक.
५	जय-विजय	भाई-भाई	भरत	काकंदी	सनत्कुमार आचार्य का कथानक.
६	धरण-लक्ष्मी	पति-पत्नी	भरत	माकंदी	अर्हदत्त आचार्य का कथानक.
७	सेन-विषेण	चचेरे-भाई	भरत	चंपा	गुणश्री साध्वी का कथानक, हरिषेण आचार्य का कथानक.
८	गुणचंद्र-व्यंतर	मनुष्य-देव	भरत	अयोध्या	विजयधर्म आचार्य का कथानक, सुसंगता साध्वी का कथानक.
९	समरादित्य-गिरिसेन	राजा-चांडाल	भरत	उज्जयिनी	

सम्राट् संप्रति संग्रहालयना प्रतिमा लेखो

आजे आपणी पासे परंपरा अने श्रमण संस्कृतिनो क्रमबद्ध इतिहास प्राप्त नथी, इतिहासना अप्रकाशित केटलाय तत्त्वो ग्रंथ भंडारो, ताम्रपत्रो, शिलालेखो, अने प्रतिमालेखोमां धरबायेला छे. प्रतिलेखन पुष्पिकाओ, ताम्रपत्रो, शिलालेखो, अने प्रतिमालेखो आवी केटलीय ऐतिहासिक सामग्रीओथी ऐतिहासिक तत्त्वनु अनुसंधान करी शकाय छे. आवी ऐतिहासिक साधन सामग्रीओमां प्रतिमालेखो अग्रता क्रमे छे, प्रतिमा लेखोमां सामान्यथी बे प्रकार मळे छे. १ पाषाण प्रतिमा लेखो २ धातु प्रतिमा लेखो, धातु प्रतिमाना अपेक्षाए पाषाण प्रतिमां लेखो बहु ओछा प्राप्त थाय छे. प्रतिमा लेखोमां श्रमण परंपरा अने तत्कालीन श्राद्ध परंपरा अखंड रूपे प्राप्त थाय छे.

श्रमण परंपराना ईतिहासमां खूटती कडीओनु अनुसंधान करवामां प्रतिमा लेखो बहु महत्त्वनो भाग भजवे छे. पूज्यपाद् गुरुदेव श्रीमद् आचार्य श्रीपद्मसागरसुरीश्वरजी महाराज प्रभु शासनना आवा ऐतिहासिक मूल्योनी काळजी अने जतन माटे सतत उद्यमशील अने कांईक करी छूटवानी भावना धरावी, प्रभु शासननी शान अने गरिमाने हृष्ट पुष्ट करता रहे छे. पूज्य गुरुमहाराजना अथाग प्रयत्नथी निर्मित आचार्य श्री कैलाससागरसुरि ज्ञानमंदिर अने सम्राट् संप्रति संग्रहालयमां आवी केटलीय ऐतिहासिक सामग्रीओ संकलित, संग्रहीत अने सुरक्षित छे.

संग्रहालयमां रहेला धातु अने पाषाण प्रतिमाना लेखो अहीं प्रस्तुत छे. आ लेखोने उतारी आपवानुं पुण्यकार्य परम पूज्य शासनसम्राट्श्री नेमिसूरिश्वरजी म.सा. ना समुदायना प. पू. आचार्यदेव श्रीसोमचंद्रसुरीश्वरजी महाराज साहेब अने एमना शिष्य परिवारे करी आप्युं छे. संग्रहालयमां जे क्रमांके धातु-प्रतिमाओ नोंधायेल छे. ते क्रमानुसार ज प्रतिमाना लेखो प्रकाशित करीए छीए.

१. विभागीय नं. २५०^१, नमिनाथ भगवान, पंचतीर्थी

सं. १५७६ वर्षे माघ वदि ५ बुधे श्रीश्रीमालज्ञातीय श्रे. महिराज भार्या हांसी सु. कडूआ भा. लखमादे बाई हांसीकेन स्वआत्मश्रेयोर्थ श्रीनमिनाथबिंबं कारितं प्रतिष्ठितं श्रीसूरिभिः वीसलनगरवास्त०

१. विभागीय नं. १७१थी २४९मां नोंधायेल वस्तुओमां लेख विगेरे न होवाथी त्यारबादना लेखो अले प्रकाशित कर्या छे.

SHRUTSAGAR

74

NOVEMBER-2014

२. विभागीय नं. २५२, पार्श्वनाथ भगवान, चतुर्विंशतिका

सं. १६९३ चैलाष्टम्यां श्रीमूलसंघे कुंदकुंदान्वये षंदेल (?)

३. विभागीय नं. २५४, जिनप्रतिमा, त्रितीर्थी

संवत् १२९९ साघ पदम भ (?)

४. विभागीय नं. २५९, पार्श्वनाथ भगवान, एकलतीर्थी

संवत् १२२५ ज्येष्ठ सुदि ८ श्रे. पिठा पत्न्या रूपिणिकया लखमण पाल्हण
देल्हण सलोतया पार्श्वबिंबे परमाणंद....कारितं श्री

५. विभागीय नं. २६१, जिनप्रतिमा, एकलतीर्थी

सं..... प्रतिष्ठिता
श्रीचंद्रसूरिभिः

६. विभागीय नं. २६२, पार्श्वनाथ भगवान, पंचतीर्थी

सं. १३८२ वर्षे आषाढ वदि ९ नीसा वंशे सा. काला भार्या वींझू पुल खीदाकेन
पिता-माताश्रियोर्थ श्रीपार्श्वनाथ श्रीवीरप्रभसूरिणामुपदेशेन प्रतिष्ठितं सूरिभिः

७. विभागीय नं. २६३, महावीरस्वामी भगवान, पंचतीर्थी

सं. १४३२ वर्षे फागुण सुदि २ शुक्रे श्रीभावडारगच्छे श्रीश्रीमालज्ञा. ठा.
पातल भ्रातृ कोठार भ्रा. क्षतेलमेरा(?) पितृव्यश्रेयसे श्रीमहावीरपंचतीर्थीः का. प्र.
श्रीभावदेवसूरिभिः ॥छ॥

८. विभागीय नं. २६७, श्रेयांसनाथ भगवान, पंचतीर्थी

सं. १४७८ वर्षे फागुण वदि ८ रवौ ऊ० ज्ञा. श्रेष्ठि वीरड स. सा. गोपाल भा. सुहडा
पु. नोडा भा. नायकदे सहितेन पिलोः श्रे. श्रीश्रेयांसः का. प्र. श्राधः श्रीदेवचार्यसि०
श्रीदेवचंद्रसूरिपदे भ० श्रीपूनचंद्रसूरिभिः

९. विभागीय नं. २६८, अजितनाथ भगवान, एकलतीर्थी

सं. १४४६ वैशाख वदि ३ सोमे प्राग्वाट ज्ञाती..... श्रे. भावठ भार्या पाल्हा
श्रेयोर्थ सुतजगडेन श्रीअजितनाथबिंबं कारितं प्र. श्री उढवगच्छे श्रीकमलचंद्रसूरिभिः

१०. विभागीय नं. २६९, सुविधिनाथ भगवान, एकलतीर्थी

सं. १६६० वर्षे श्रीसुविधिनाथबिंबं का. सा. मनजी ।

श्रुतसागर

75

नवम्बर-२०१४

११. विभागीय नं. २७३, जिनप्रतिमा, एकलतीर्थी

सं. १.....७ प्र. वैशाख सुदि ४ भ. जगतकीर्ति ग. सी. संत (?)

१२. विभागीय नं. २७५, जिनप्रतिमा, एकलतीर्थी

संवत् १५११ वर्षे मा. सुदि ५ श्रीमूलसंघे भ. श्रीसकलकीर्ति तस्त्रिष्य ब्र. जिणदास उपदेशात् वछरवाल वीस० ज्ञाते सा. साढा भा. नाउ सुत सिवदे ।

१३. विभागीय नं. २७६, जिनप्रतिमा, एकलतीर्थी

१५३४ फा. शु. श्रीमूलसंघे श्रीभुवनकीर्ति हुंबडवंशे श्रे. खेता भा. नांकु पुत्र साकु तत्पुत्र सा. प्रणमति.

१४. विभागीय नं. २७८, जिनप्रतिमा, एकलतीर्थी

सं. १८२५ व. व. सु. कुं. पं. श्रीमतू तं मिदं पूजनार्थं कृतं

१५. विभागीय नं. २८१, पार्श्वनाथ भगवान, एकलतीर्थी

सं. १६४० व. माघ. व. २ श्री..... मूलसंघे भ. श्रीभुवनकीर्तिगुरुणामुपदेशत् सा.

१६. विभागीय नं. ३२३, सुमतिनाथ भगवान, पंचतीर्थी

संवत् १५५३ वर्षे माघ सुदि ६ सोमे ओसवाल ज्ञा. सा. लांपा भा. लालादे पु. सा. मेघा सा. धना-गणपतिभ्यां स्वभ्रातृनरपालश्रेयसे श्रीसुमतिनाथबिंबं कारितं श्रीबिंबदणीकगच्छे सिद्धाचार्यसंताने प्र. श्रीकक्कसूरिभिः ॥ थल ग्रामे

१७. विभागीय नं. ३२४, शांतिनाथ भगवान, पंचतीर्थी

सं. १५१८ वर्षे ज्येष्ठ मासे श्रीश्रीमाली श्रे. चांपा भा. चांपलदे पु. लाडण..... रूपिणि पु. महिपतिमुख्यसहितेन श्रीअंचलगच्छेश श्रीजयकेसरिसूरि उपदेशतः स्वश्रेयसे श्रीशांतिनाथबिंबं कारि. श्रीसंघ० प्रति. श्रीः श्रीः ॥

१८. विभागीय नं. ३२५, धर्मनाथ भगवान, पंचतीर्थी

संवत् १५३४ वर्षे पोस व. ६ रवौ प्रागवाटज्ञा. सा. चांपलदे पु. महिराज-धना भा. डाहीका पु. आंबा श्रे. श्रीधर्मनाथबिंबं. का. प्र. लघुतपापक्षे श्रीलक्ष्मीसागर..... अरेल?

SHRUTSAGAR

76

NOVEMBER-2014

१९. विभागीय नं. ३२७, सुविधिनाथ भगवान, पंचतीर्थी

सं. १४७८ वर्षे वै. शु. ६ दिने प्राग्वटज्ञातीय व्य० अता सु. श्रे. मांडण भार्या
माणिकदे-महगलदे सु. डूंगर-भाखर- धर्मसी-खीमसी-पांचा-धना-तल व्य. डूंगरेण
पितृश्रेयोर्थ श्रीसुविधिनाथबिंबं कारितं प्रतिष्ठितं तपागच्छे श्रीदेवसुंदरसूरिभिः ॥

२०. विभागीय नं. ३२८, आदिश्वर भगवान, चतुर्विंशतिका

संवत् १५०७ वर्षे वैसाख सुदि ११..... दिने श्रीमूलसंघे भट्टारकश्रीजिनचंद्रदेव.....
सजैसिंघ भार्या..... तत्पुत्र रूधै..... भार्या मनसिरि तत्पुत्र छाजु भार्या
कुहरसिरि

संकेतसूचि

वास्त. = वास्तव्य

सं. = संवत

का. = कारितं

प्र. = प्रतिष्ठितं

ज्ञा. = ज्ञातीय

भा. = भार्या

पु. = पुत्र

प्रति. = प्रतिष्ठित

श्रे. = श्रेष्ठी

सा. = साह, शाह

ब्र. = ब्रह्मचारी

ऊ. = ऊपकेश

ठा. = ठकुर, ठाकुर

भ्रा. = भ्राता

भ. = भट्टारक

व्य. = व्यवहारी



॥ पंचाचार्यपदप्रदानाष्टकम् ॥

संजयकुमार झा

श्रीमते योगनिष्ठाय, आत्मसाधनकारिणे।

सपादशच्छास्त्रकर्त्रे, बुद्ध्यब्धिसूरये नमः॥१॥

गच्छाचार्यो प्रशान्तमूर्तिः, सूरिः श्रीकैलाससागरः।

तच्छिष्यो सूरि कल्याणः, विनेयः पद्मसागरः॥२॥

राष्ट्रसंतं सुधीर्धरिं, तीर्थरक्षणकारकम्।

श्रुतसंरक्षकं वन्दे, सूरि श्रीपद्मसागरम् ॥३॥

राजस्थाने शुभे प्रान्ते, नाकोड़ातीर्थपावने।

सूरिपदप्रदानस्तु, वर्षावासे सुनिश्चितम्॥४॥

संघस्तुतिं परिभाव्य, दृष्ट्वा शिशुगुणगौरवान्।

जिनशासनसमुन्नत्यै, कृतोऽयं हि सुनिर्णयम्॥५॥

देवेन्द्रवन्दित देवेन्द्रं, आचार्यगुणधारकम्।

सूरिपदसमारूढं, भूयात् कल्याणकारकम्॥६॥

ज्ञानार्णवसमुद्भूतं, ज्ञानवैभवसंयुतम्।

पद्मानंदकरं शान्तं, सूरि हेमेन्दुसागरम्॥७॥

मग्नस्तु गुरुसेवायां, लग्नस्तु धर्मचिंतने।

श्रीसंघचिन्तको वन्दे, सूरि विवेकसागरम्॥८॥

श्रुतनिष्ठः श्रुतभक्तः, श्रुतसेवापरायणः।

श्रुतसंरक्षकं वन्दे, सूरि अजयसागरम्॥९॥

विमलबुद्धिसम्पन्नं, विमलकार्यकारिणम्।

सूरिपदसमारूढं, वन्दे विमलसागरम्॥१०॥

जयन्तु सूरयः सर्वे, संघकल्याणकारकाः ।

आत्मोत्थानपराः सन्तु, मोक्षमार्गानुगामिनः ॥

SHRUTSAGAR

78

NOVEMBER-2014

नयनाम्बराश्वभू(२०७१)वर्षे, मार्गोज्ज्वलदशमी विधौ।
प्रसङ्गो पूर्ण सञ्जातः, पार्श्व-पद्मप्रसादतः ॥११॥

मल्लिमहिसमुद्भूतः, झोपाख्यो द्विजनन्दनः ।
सञ्जयेन कृतं भव्यं, सूरिपद शुभाष्टकम् ॥१२॥

॥ इति पञ्चाचार्यपदप्रदानाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

सूरिपद महात्म्य

तित्थयरसमो सूरि, सम्मं जो जिणमयं पयासेई ।

आणाइ अइक्कंतो, सो कापुरिसो न सप्पुरिसो ॥१३॥

जे सम्यग् रीते जिन मतने प्रकाशे छे ए आचार्य तीर्थकर
समान छे. आज्ञानो अतिक्रम करनारने कुत्सित पुरुष जाणवो, पण
सत्पुरुष न जाणवो.

(संबोध सित्तरी)

पवयणरयणनिहाणा, सूरिणो जत्थ नायगा भणिया ।

संपइ सव्वं धम्मं, तयहिट्ठणं जओ भणियं ॥८८॥

जे धर्ममां जिनोक्त शास्त्ररूप रत्नोना निधान एवा आचार्यने
नायक कह्णा छे ते सघळोय धर्म आचार्यना आधारवाळो छे.

कइयावि जिणवरिदा, पत्ता अयरामरं पहं दाउं ।

आयरिएहि पवयणं, धारिज्जइ संपयं सयलं ॥८९॥

कोई काले जिनेश्वरो मोक्षमार्ग भव्य जीवोने आपीने मोक्षने
पाम्या छे वर्तमानकाळमां सकल प्रवचन आचार्योथी धारण कराय
छे.

(संबोध प्रकरण)

पुस्तक समीक्षा

डॉ. हेमन्त कुमार

पुस्तक नाम	:	चिकागो प्रश्नोत्तर (गुजराती अनुवाद)
लेखक	:	श्री विजयानंदसूरि प्रसिद्ध नाम- श्री आत्मारामजी
संपादन	:	श्री विजय पुण्यपालसूरि
अनुवाद	:	श्री संयमकीर्तिविजयजी
प्रकाशक	:	पार्श्वभ्युदय प्रकाशन, अहमदाबाद
प्रकाशन वर्ष	:	विक्रम संवत्-२०७०
मूल्य	:	१००/-
भाषा	:	हिन्दी व गुजराती

तपागच्छगगन के देदीप्यमान नक्षल आचार्य श्री विजयानन्दसूरिजी जिनका प्रसिद्ध नाम आत्मारामजी महाराज है, ने चिकागो (शिकागो), अमेरिका में ईस्वी सन् १८९३ में आयोजित सर्वधर्म सम्मेलन जैनधर्म से संबंधित विषयों के प्रतिपादन हेतु एक ग्रंथ की रचना की जिसका नाम चिकागो प्रश्नोत्तर रखा.

यह ग्रंथ चिकागो में आयोजित सर्वधर्म सभा में प्रस्तुति के निमित्त और इस ग्रंथ में वहाँ के प्रश्नों के ही उत्तर होने से इसका यह नाम सर्वथा सार्थक एवं उचित है.

जब सर्वधर्म सम्मेलन में उपस्थित होने हेतु पूज्य आत्मारामजी महाराज को निमंत्रण मिला तो उन्होंने पत्र लिखकर आयोजकों को बताया कि वृद्धावस्था के कारण, शास्त्रीय कारण और कितने लौकिक कारणों से वहाँ उपस्थित नहीं होने की सूचना दी.

आयोजकों के विशेष निवेदन पर उन्होंने वहाँ प्रस्तुति हेतु एक लेख लिखा जो प्रस्तुत ग्रंथ के रूप में जसवंतराय जैनी, लाहौर की ओर से विक्रम संवत् १९६२ में प्रकाशित होकर समाज के समक्ष प्रस्तुत हुआ.

पूज्य आत्मारामजी के प्रतिनिधि के रूप में मुंबई के समाज ने श्री वीरचंदजी

गाँधी को चिकागो भेजने का निर्णय लिया और श्री गाँधी ने पूज्यश्री के ग्रंथ के आधार पर वहाँ सर्वधर्म सभा को संबोधित किया तथा लोगों द्वारा पूछे गए प्रश्नों का समुचित उत्तर देकर जैनधर्म की विशिष्टता एवं महत्ता स्थापित की।

आज जैन एवं जैनेतर समाज में बहुत कम लोग ही जानते हैं कि उस सर्वधर्म सम्मेलन में हिन्दू धर्म के सदस्य के रूप में स्वामी विवेकानन्द के साथ जैन धर्म के सदस्य के रूप में श्री वीरचंदजी गाँधी ने भाग लिया था।

श्री वीरचंदजी गाँधी वहाँ किसके प्रतिनिधि के रूप में गये थे और किस प्रकार उन्होंने जैन धर्म की विशेषताओं को प्रस्तुत किया था यह सब भी जैनेतर की तो बात ही नहीं जैन समाज के भी बहुत कम लोग ही जानते हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ के अध्ययन से पाठकों को यह अच्छी तरह से ज्ञात होगा कि उस समय किस प्रकार जैन धर्म का प्रचार-प्रसार भारत के बाहर किया गया। इस ग्रंथ में जैन धर्म के सिद्धांतों का प्रतिपादन बहुत ही सुन्दर ढंग से विस्तार पूर्वक किया गया है।

ईश्वर, ईश्वरकर्तृत्व, कर्मसिद्धांत आदि का विशिष्ट विवेचन किया गया है। आत्मा के शुद्ध स्वरूप को जानने के लिये देव, गुरु और धर्म का आराधन एवं अवलम्बन आवश्यक होता है।

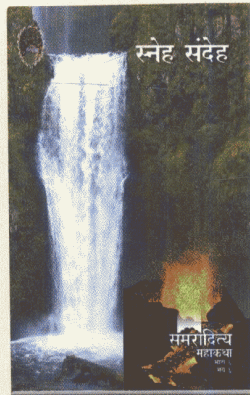
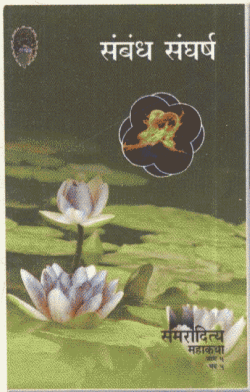
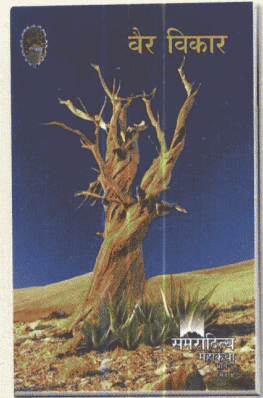
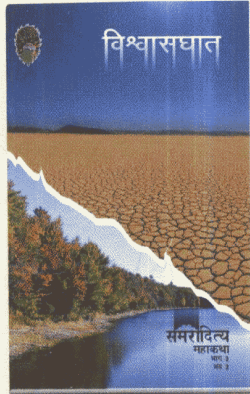
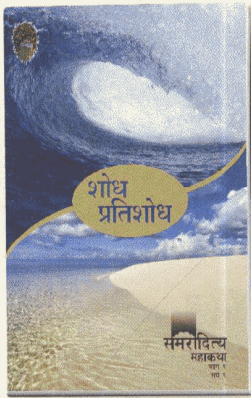
प्रस्तुत ग्रंथ का अध्ययन इनके वास्तविक स्वरूप को समझने में सहयोगी सिद्ध होगा। साथ ही वाचकों को यह विदित होगा कि शिकागो सम्मेलन में जैन धर्म के प्रतिनिधि ने भी उपस्थित होकर किस प्रकार धर्म को प्रतिष्ठित किया।

पूज्य आचार्य श्री पुण्यपालसूरिजी ने इस ग्रंथ का संपादन व पुनःप्रकाशन करवा कर जैन समाज पर बहुत बड़ा उपकार किया है तो साथ ही पूज्य मुनि श्री संयमकीर्तिविजयजी ने गुजराती भाषा में अनुवाद कर गुजराती भाषा-भाषी वाचकों के लिए इस ग्रंथ सरल एवं सुबोध बनाने का जो अनुग्रह किया है वह सराहनीय एवं स्तुत्य कार्य है।

भविष्य में भी जिनशासन की उन्नति एवं श्रुतसेवा में समाज को इन महात्माओं का अनुपम योगदान प्राप्त होता रहेगा, ऐसी शुभेक्षा सहित, कोटिशः वन्दन।

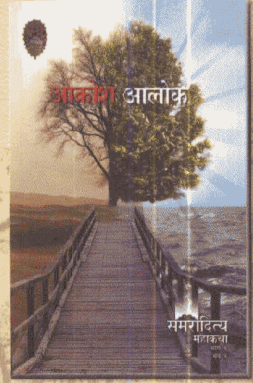
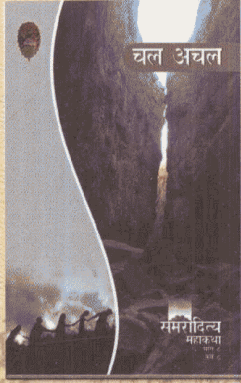
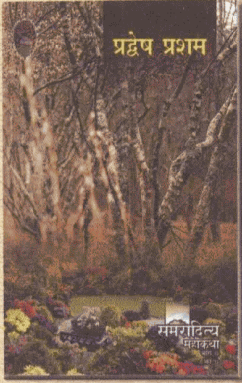


श्री नाकोडा तीर्थ सूरि सिंहासनारोहण महोत्सव प्रसंगे
प्रकाशित थनार आगामी प्रकाशनो



**TITLE CODE : GUJ MUL 00578. SHRUTSAGAR (MONTHLY). POSTAL AT. GANDHINAGAR. ON
15TH OF EVERY MONTH. PRICE : RS. 15/- DATE OF PUBLICATION November 2014**

श्री नाकोडा तीर्थे सूरि सिंहासनारोहण महोत्सव प्रसंगे प्रकाशित थनार आगामी प्रकाशनों



To,

BOOK-POST / PRINTED MATTER

प्रकाशक

आचार्य श्री कैलाससागरसूरी ज्ञानमंदिर

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र कोबा, गांधीनगर ३८२००७

फोन नं. (०७९) २३२७६२०४, २०५, २५२, फेक्स (०७९) २३२७६२४९

Website : www.kobatirth.org

email : gyanmandir@kobatirth.org

**PRINTED, PUBLISHED AND OWNED BY : SHRI MAHAVIR JAIN ARADHANA KENDRA,
PRINTED AT : NAVPRABHAT PRINTING PRESS. 9-PUNAJI INDUSTRIAL ESTATE,
DHOBHGHAT, DUDHESHWAR, AHMEDABAD-380004 PUBLISHED FROM : SHRI MAHAVIR
JAIN ARADHANA KENDRA, NEW KOBA, TA. & DIST. GANDHINAGAR, PIN : 382007, GUJARAT.
EDITOR : Hiren Kishorbhai Doshi**